श्री गुरुस्तुतिः

संपादक :
ईश्वर आश्रम ट्रस्ट
प्रधान कार्यालय :
गुप्तगंगा, निशात, कश्मीर

A. N. THUSU
29-4-92
Swamiji's Birthday

श्री गुरुस्तुतिः
(परिवर्धित नवीन संस्करण)

Swamiji Yog 74.
18-9-97
P. 1 - one shaloka
P- 3 - 4, 5
P - 9, 10, 11

Coblitam (3 times - 08)
bells for guest

संपादक
ईश्वर आश्रम ट्रस्ट
प्रधान कार्यालय
गुप्तगंगा, निशात, कश्मीर।
प्रकाशक
शारिका प्रकाशन, दिल्ली

मुद्रक
गोल्डन प्रिन्टर्स,
६१, म्युनिसिपल मार्किट, कनाट प्लेस, दिल्ली - ११० ००१
दूरभाष : ३३१२६५०, ३३२२६८७

प्रथम संस्करण ईस्वी सन् १९९२

मूल्यम् ३३ रुपये

पुस्तक प्राप्ति स्थान :
ईश्वर आश्रम ट्रस्ट
जम्मू कार्यालय
२ महेन्द्र नगर
कनाल रोड, जम्मू (तवी)
पिन - १८०००१

स्वामी लक्ष्मणजी महाराज

ईस्वी 9.5.1907
वैशाख कृष्ण पक्ष द्वादशी

27.9.1991
आश्विन कृष्ण पक्ष चतुर्थी

इस संस्करण के विषय में

परभैरवस्वरूप सदास्मरणीय गुरुवर्य ईश्वरस्वरूप लक्ष्मणजी महाराज के गत वर्ष २७ सितम्बर आश्विन कृष्णपक्ष चतुर्थी को भैरवधाम की ओर सिधारने के पश्चात् आज उनकी प्रथम जन्म जयन्ती समारोह के उपलक्ष्य में नवीनरूप से संकलित व परिवर्धित श्रीगुरुस्तुतिः का यह प्रथम संस्करण प्रस्तुत करते हुए हमें अपार हर्ष हो रहा है। कश्मीरभूमि की वर्तमान अव्यवस्थित परिस्थिति के कारण यत्र तत्र ठहरनेवाले भक्तजनों की रविवासरीय गुरुपूजा का कार्यक्रम यथावत् और एक समान हो इसी बात को ध्यान में रखकर ईश्वर आश्रम ट्रस्ट निशात, कश्मीर, के आदरणीय सदस्यों के प्रोत्साहन के परिणामस्वरूप इस संस्करण के प्रकाशन का कार्य सर्वप्रथम सम्भव हो सका। पिछले तीन चार वर्षों में स्वनामधन्य गुरु-महाराज अपनी परभैरव अवस्था में ईश्वराश्रम कश्मीर में आधिव्याधि से पीड़ित अपने भक्तजनों को समय समय पर अमूल्यवचनामृत से सींचा करते थे। परमामृत के उन्हीं शीकरों से इस संस्करण का कलेवर सिक्त हुआ है। वास्तव में गुरुमहाराज ने निर्वाण प्राप्ति से पूर्व अपने ही कर-कमलों से गुरुस्तुतिः के इस नवीन रूप को संजोया और संवारा था। माला के बिखरे दानों की तरह हमने एक धागे में पिरोकर उसे छोटी-सी पुस्तिका का रूप दिया। आशा है सारे शिष्यगण और भक्तजन इस प्रयास से लाभान्वित होंगें।

सन् १९६९ में गुरु महाराज की आज्ञा से 'बहुरूपगर्भस्तोत्र' का प्रामाणिक पाठ आश्रम की ओर से प्रकाशित हुआ था। उसकी सारी प्रतियां अब समाप्त हो चुकी थी। इस आवश्यकता को देखकर प्रस्तुत गुरुस्तुतिः के साथ यथाविधि पुनः संशोधित कर उसे महिम्नस्तोत्र और आचार्य अभिनव गुप्त रचित शिव चामर स्तोत्र, जिसका प्रचलन शैवमतावलम्बियों में सर्वाधिक है, के साथ प्रकाशित किया।

प्रातः वन्दनीया, ब्रह्मवादिनी, परभैरवलीना, ईश्वर स्वरूप महाराज की सर्वस्वभूता श्री शारिका देवी के परभैरवी भाव प्राप्ति के अवसर पर गुरु महाराज ने अपने मुखारविन्द से जिस नवीन शारिका मन्त्र तथा उनकी महिमास्तुति का प्रकटीकरण किया, उसका भी यहाँ स्थान देकर इस संस्करण का हमने गौरव बढ़ाया।

श्री इन्द्रकृष्ण रैणा, मुख्य सलाहकार व सचिव ईश्वर आश्रम ट्रस्ट निशात कश्मीर, के हम परम आभारी हैं कि उन्होंने मुँहमाँगी आर्थिक सहायता देकर इस पुस्तक को साकार बनाने की हमारी इच्छा संपूर्ण की। आशा है कि आगे भी वे इसीतरह हमें प्रोत्साहित करते रहेंगे।

इस संस्करण के विषय में

परभैरवस्वरूप सदास्मरणीय गुरुवर्य ईश्वरस्वरूप लक्ष्मणजी महाराज के गत वर्ष २७ सितम्बर आश्विन कृष्णपक्ष चतुर्थी को भैरवधाम की ओर सिधारने के पश्चात् आज उनकी प्रथम जन्म जयन्ती समारोह के उपलक्ष्य में नवीनरूप से संकलित व परिवर्धित श्रीगुरुस्तुतिः का यह प्रथम संस्करण प्रस्तुत करते हुए हमें अपार हर्ष हो रहा है। कश्मीरभूमि की वर्तमान अव्यवस्थित परिस्थिति के कारण यत्र तत्र ठहरनेवाले भक्तजनों की रविवासरीय गुरुपूजा का कार्यक्रम यथावत् और एक समान हो इसी बात को ध्यान में रखकर ईश्वर आश्रम ट्रस्ट निशात, कश्मीर, के आदरणीय सदस्यों के प्रोत्साहन के परिणामस्वरूप इस संस्करण के प्रकाशन का कार्य सर्वप्रथम सम्भव हो सका। पिछले तीन चार वर्षों में स्वनामधन्य गुरु-महाराज अपनी परभैरव अवस्था में ईश्वराश्रम कश्मीर में आधिव्याधि से पीड़ित अपने भक्तजनों को समय समय पर अमूल्यवचनामृत से सींचा करते थे। परमामृत के उन्हीं शीकरों से इस संस्करण का कलेवर सिक्त हुआ है। वास्तव में गुरुमहाराज ने निर्वाण प्राप्ति से पूर्व अपने ही कर-कमलों से गुरुस्तुतिः के इस नवीन रूप को संजोया और संवारा था। माला के बिखरे दानों की तरह हमने एक धागे में पिरोकर उसे छोटी-सी पुस्तिका का रूप दिया। आशा है सारे शिष्यगण और भक्तजन इस प्रयास से लाभान्वित होंगें।

सन् १९६९ में गुरु महाराज की आज्ञा से 'बहुरूपगर्भस्तोत्र' का प्रामाणिक पाठ आश्रम की ओर से प्रकाशित हुआ था। उसकी सारी प्रतियां अब समाप्त हो चुकी थी। इस आवश्यकता को देखकर प्रस्तुत गुरुस्तुतिः के साथ यथाविधि पुनः संशोधित कर उसे महिम्नस्तोत्र और आचार्य अभिनव गुप्त रचित शिव चामर स्तोत्र, जिसका प्रचलन शैवमतावलम्बियों में सर्वाधिक है, के साथ प्रकाशित किया।

प्रातः वन्दनीया, ब्रह्मवादिनी, परभैरवलीना, ईश्वर स्वरूप महाराज की सर्वस्वभूता श्री शारिका देवी के परभैरवी भाव प्राप्ति के अवसर पर गुरु महाराज ने अपने मुखारविन्द से जिस नवीन शारिका मन्त्र तथा उनकी महिमास्तुति का प्रकटीकरण किया, उसका भी यहाँ स्थान देकर इस संस्करण का हमने गौरव बढ़ाया।

श्री इन्द्रकृष्ण रैणा, मुख्य सलाहकार व सचिव ईश्वर आश्रम ट्रस्ट निशात कश्मीर, के हम परम आभारी हैं कि उन्होंने मुँहमाँगी आर्थिक सहायता देकर इस पुस्तक को साकार बनाने की हमारी इच्छा संपूर्ण की। आशा है कि आगे भी वे इसीतरह हमें प्रोत्साहित करते रहेंगे।

ईश्वरस्वरूप के परमभक्त श्री सुरेश कुमार सोपोरी, जो भारत सरकार के प्रकाशन विभाग के नियन्त्रक हैं, हार्दिक धन्यवाद के पात्र हैं। उन्होंने स्वविभागीय कार्य में अति व्यस्त रहने पर भी अपने सहयोग और अमूल्य सुझावों के परिणामस्वरूप इस संस्करण का प्रकाशन बहुत थोड़े समय में सम्पन्न करवाया।

इस संस्करण के आकार के बढ़ने के भय से, ढेर सारे स्वामीजी महाराज के मुखारविन्द से प्रस्फुटित अमृतवाक्य हम इसमें न धर सके। आशा है कि अगले संस्करण में अनुवाद सहित उनका प्रकाशन करके हम अपने को कृतकृत्य समझेंगें।

परभैरवधामस्थ ईश्वरस्वरूप लक्ष्मणजी महाराज द्वारा प्रज्वलित ज्योति अविद्याग्रस्त भक्तजनों के अन्तःपथ के अन्धकार को चीरकर समय समय पर मार्ग प्रदर्शन करें यही गुरु महाराज से हमारी सनम्र प्रार्थना है।

वैशाख कृष्ण पक्ष द्वादशी
स्वामी लक्ष्मणजी महाराज जन्म जयन्ती
२९ अप्रैल बुधवार
सन् १९९२

प्रोफेसर मखनलाल
कुकिलू
F-115
सरिता विहार
नयी दिल्ली - ११० ०४४

।। ॐ श्रीगुरवे नमः।।

आलम्बे जगदालम्बं हेरम्बचरणाम्बुजम्।
शुष्यन्ति यद्रजः स्पर्शात् सद्यः प्रत्यूहवारधयः।।

नमः कारुण्यदेहाय वीराय शुभदन्तिने।
भक्तिगम्याय भक्तानां दुःखहर्त्रे नमोस्तुते।।

लाभस्तेषां जयस्तेषां कुतस्तेषां पराजयः।
येषामिन्दीवरश्यामो हृदयस्थो जनार्दनः।।

महाबले ! महोत्साहे ! महाभय विनाशिनि ! ।
त्राहि मां देवि ! दुष्प्रेक्ष्ये शत्रूणां भयवर्द्धिनि ! ।।

गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णुः गुरुः साक्षान्महेश्वरः।
गुरुरेव जगत्सर्वं तस्मै श्रीगुरवे नमः।।

नमामि सद्गुरुं शान्तं प्रत्यक्षं शिवरूपिणम्।
शिरसा योग पीठस्थं धर्मकामार्थ सिद्धये।।

श्रीगुरुं परमानन्दं वन्दाम्यानन्दविग्रहम्।
यस्य सन्निधिमात्रेण चिदानन्दायते परम्।।

अज्ञानतिमिरान्धस्य ज्ञानाञ्जनशलाकया।
चक्षुरुन्मीलितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः।।

ज्ञानिनां ज्ञानरूपाय प्रकाशाय प्रकाशिनाम्।
विवेकिनां विवेकाय विमर्शाय विमर्शिनाम्।।

ध्यानमूलं गुर्रोमूर्तिः पूजामूलं गुरोः पदम्।
शास्त्रमूलं गुरोर्वाक्यं मोक्षमूलं गुरोः कृपा।।

यो गुरुः स शिवः प्रोक्तो यः शिवः स गुरुः स्मृतः।
उभयोरन्तरं नास्ति गुरोरपि शिवस्य च।।

ब्रह्मानन्दं परमसुखदं केवलं ज्ञानमूर्तिम्।
द्वन्द्वातीतं गगन सदृशं तत्त्वमस्यादि लक्ष्यम्।।

नित्यं शुद्धं निराभासं निराकारं निरञ्जनम्।
नित्यबोध चिदानन्दं तस्मै श्रीगुरवे नमः।।

येन स्मृतेन भवपाशनिकृन्तनैका
संवित्समुल्लसति सर्वगता शिवाख्या।
नृणामनुत्तरपदप्रविकासहेतु–
स्तस्मै नमोऽस्तु गुरवे परमेश्वराय।।

घोर संसारकान्तार–समुत्तारैकहेतवे।
नमस्ते चित्स्वरूपाय शिवाय गुरवे नमः।।

यस्य स्मरणमात्रेण ज्ञानमुत्पद्यते स्वयम्।
स एव सर्वसंपत्तिस्तस्मै श्रीगुरवे नमः।।

नमस्ते गुरवे तस्मै इष्टदेव स्वरूपिणे।
यस्य वागमृतं हन्ति विषं संसार संज्ञकम्।।

सहस्रदलपंकजे सकलशीतरश्मिप्रभम्
वराभयकराम्बुजं विमल गन्धपुष्पाम्बरम्।
प्रसन्नवदनेक्षणं सकलदेवतारूपिणम्
स्मरेत् शिरसि संततं ईश्वरस्वरूपं लक्ष्मणम्।।

निःसक्त मणिपादुकानियमिताघ कोलाहलं
स्फुरत्किसलयारुणं नखसमुल्लसच्चन्द्रकम्।
परामृतसरोवरोद्यत सरोज सद्रोचिषम्
भजामि शिरसि स्थितं ईश्वरस्वरूपस्य पादद्वयम्।।

गुरुशक्तिर्जयत्येका मद्रूपप्रविकासिका।
स्वरूपगोपनव्यग्रा शिवशक्तिर्जिता यया।।

यस्य प्रसादादहमेव शम्भु-
र्यस्य प्रसादादहमीश्वरोऽस्मि।
यस्य प्रसादादहमेव सर्व-
स्तस्मै नमः श्रीगुरवे शिवाय।।

शैवप्रजाः स्रष्टुमना महेशो
गुरुक्रमेऽभून्मनुदेवरूपः।
स्तुमो गुरुं तं परमेष्ठिरूपं
साक्षाच्छिवं श्रीमनुदेवमेव।।

विकल्पशान्त्यर्थमिव प्रवृत्ता-
च्छास्त्रात्सदादूरतमस्वभावे।
संवित्स्वभावे परिवर्तमानो
दृष्टचैव शिष्यानकरोत्स शंभून्।।

तत्सिद्धपादप्रभवत्प्रकाशो
माहेश्वरोऽवाप्तशिवात्मभावः।
श्रीमानभूद्राम इति प्रसिद्धो
यो मद्गुरोः कल्मषरावणारिः।।

ज्येष्ठो प्यसौमद्गुरुजन्मजात-
हर्षोल्लसद्विस्मृतदेहभावः।
रामोऽस्म्यहं लक्ष्मण एष जात
इत्येव गायन् सहसा ननर्त।।

शिष्यान् समुद्बोधयितुं स नित्यं
सदातनं स्वस्य शिवस्वभावम्।
प्रादर्शयद्देहगतं समक्षं
होराश्चतस्रोऽधिगतः समाधिम्।।

कृत्यं विधेयस्य जनस्य शेषं
सप्ताब्दकल्पस्य च लक्ष्मणस्य।
शिष्यप्रधानं महताबकाकं
निर्दिश्य सोऽगान्निजधाम शैवम्।।

न लक्षणं यस्य न योऽस्ति लक्ष्यः
षडध्वनो योऽस्ति च लक्ष्मभूतः।
यो लक्ष्मणस्येव च लक्ष्मणस्य
रामो गुरू राम इव स्तुमस्तम्।।

ऊर्जस्य शुक्ले च तिथौ चतुर्थ्यां
जगज्जिगीषून् स्वत ऊर्जयन्तः।
आविर्बभूवुर्महताबकाकाः
काश्मीरकण्डाभिधजन्मभूमौ।।

तानद्य सर्वेवयमाविशन्तो
गुरून् स्मरन्तो मनसाथ वाचा।
विशुद्धभक्तया प्रणता नमामः
स्थितांश्च ज्ञानप्रभयागतानपि।।

तज्ज्ञानगोत्रे गुरवश्चकासति
ज्ञानप्रभाभिः प्रसृताभिरद्य।
श्रीलक्ष्मणाख्याः प्रणतां जनानां
दृष्टचैव दृष्टेः तमसां विघातकाः।।

बिभर्त्ति स्वस्मिन् स्वविमर्शशक्तया
सर्गस्थितिध्वंसमनारतं यः।
तमच्छमच्छन्नमनन्तरूपं
श्रीलक्ष्मणाख्यं प्रणमामि वन्द्यम्।।

प्रकाशरूपस्य चिदात्मनस्ते
स्वातन्त्र्यमेतन्नहि किंचिदन्यत्।
शिवादिपृथ्व्यन्तसमस्तविश्व-
रूपेण चैकोऽपि विभासि यत्त्वम्।।

त्वय्येव भातः स्मृतिविस्मृती ते
द्वयोरपि त्वं स्वयमेव भासि।
तथापि सांमुख्यसुखाभिवर्षिणी
स्मृतिः प्रिया ते नहि विस्मृतिर्मे।।

वाचा कया त्वामहमीशमीडे
प्रसादये त्वां क्रियया कया वा।
यतः सदान्तर्मुखभास्वरूपो
न मायिकं पश्यसि किंचिदेतत्।।

तस्याप्रतर्क्यविभवस्य महेश्वरस्य
पादौ नमामि नयनामृतलक्ष्मणस्य।
देवस्य यस्य महतः करुणाकटाक्षै-
रालोकितोऽहमिह विश्ववपुर्विभामि।।

प्रत्यात्मभूतः परमात्मरूपो
नित्यः शिवः सर्वसुलक्षणोऽसि।
लोकैरलक्ष्यो विदुषाभिलक्ष्यो
विलक्षणो लक्ष्मण उच्यसे त्वम्।।

शिष्याननेकाञ् जगतः समुद्धर-
न्नासीत्पुरा गुप्तगुरुर्गरीयान्।
यो लक्ष्मणो लक्ष्मण एष नो गुरुः
पायात्समस्ताञ् शरणागतान् सः।।

शिवस्वरूपोऽपि जगत्स्वरूपः
स्वात्मस्वरूपोऽपि परस्वरूपः।
नित्योऽपि यो नित्यमनित्यरूप-
स्तस्मै नमः श्रीगुरवेऽद्भुताय।।

स्वाराज्यसाम्राज्यपदप्रदायिने
नित्याय शांताय परापरात्मने।
कारुण्यपूरामृतवर्षिदृष्टये
श्रीदेशिकायामिततेजसे नमः।।

स्तोतुं त्वां कः समर्थोऽस्ति प्राणबुद्धिप्रवर्तकम्।
किन्तु प्रभोः प्रसादार्थे ममैतद्वाग्विजृम्भणम्।।

किं न दत्तं त्वया मह्यं दर्शितं किं न मां पुनः।
तव स्तुतिपरैवेयं वाणी मे भवतात्प्रभो !।।

कुत्र नासि कदा नासि भाति किं वा त्वया विना।
स्थितं देवं नमस्यामि सेयमर्चा परा मम।।

न यत्र वाणी न मनोऽपि यस्मिन्
गुरौ कथंचित्क्रमते विशुद्धे।
कथं स्तुतिस्तस्य भवेत्परं स
भक्तार्थमद्यास्ति गृहीतरूपः।।

येन-मानमितिमेयभानतः
संनिवर्त्त्य निजवैभवे शिवे।
स्थापितोऽस्मि कृपयावलोकित-
स्तं नतोऽस्मि गुरुमेव लक्ष्मणम्।।

सद्यः प्रपन्नजनताहृदयाम्बुजन्म
संबोधयत्यखिलविश्वमयच्छदैर्यत्।
तद्देशिकाङ्घ्रिजमहो मिहिरायमाणं
शश्वच्चकास्तु सबलाकृति शाश्वतं नः।।

हृदम्बुजदिनेशाय मोहरण्यदवाग्नये।
शान्तिरात्रिमृगांकाय चिद्रूपगुरवे नमः।।

उपायवनचैत्राय शिवाय शिवयोगिनाम्।
भविनां भुक्तिमुक्तयर्थं कल्पवृक्षाय ते नमः।।

स्वात्मविश्रांतिदं यस्य दर्शनं भवतापहम्।
नमस्तस्मै स्वतन्त्राय पारतन्त्र्यविनाशिने।।

आद्यन्तहीनोऽस्ति विभोर्हि यस्य
भातं समस्तं भवमश्नुवानः।
संकोचशून्यप्रसरत्प्रकाशः
स मे गुरुः केन कथं स्तुतः स्यात्।।

वाचा निर्मलया सुधामधुरया दृष्टया च शिष्यान्निजा-
नुद्धर्तुं नरविग्रहीव रमते यः स्वात्मसंस्थः शिवः।
तं वन्दे परमप्रकाशनिबिडं स्वेच्छास्फुरद्विग्रहं
कारुण्याम्बुनिधिं महागुरुवरं श्रीलक्ष्मणं सर्वदम्।।

शश्वच्छांतिसमावृतोऽपि विषयैरेभिर्निजोद्भासितै-
र्हासोल्लासविलासकौतुकपरः स्वस्मिन्समन्तात्स्थितः।
यश्चैतन्यसुधानिधिर्विजयते देवः स एको गुरु-
र्विद्वन्मानसपुष्करप्रविततज्ञानप्रभो लक्ष्मणः।।

पूज्यः श्रीगुरुराजलक्ष्मणशिवः काश्मीरदेशस्थितो
भातु ध्वान्तनिवारको भुवि नृणां चित्ते स शान्तिप्रदः।
आसीदस्ति भवत्यपि प्रतिदिनं यो लीलया सन्ततं
स्वच्छः स्वाद्भुतशक्तिचक्रविभवस्त्रैलोक्यमेतज्जगत्।।

वाणी यस्य सुनिर्मलातिसरसा तापत्रयोज्जासने
यद्दृष्टिं करुणाभरां नतजनोद्धारे परिस्पर्धते।
यत्रैकापि नतिर्ददाति सकलं साम्राज्यमत्यद्भुतं
तत्रैवास्तु महेश्वरे मम गुरौ श्रीलक्ष्मणे मे रतिः।।

श्रीगुरुपदनखजन्मा
जन्मान्धस्यापि प्रकाशयन्नर्थान्।
स जयति कोऽपि विकासः
प्रकाशमानोऽनवच्छिन्नः।।

विनाशिताशेषविकल्पबुद्ध च-
हंरूपमन्त्रार्थविकासिकाभ्याम्।
देहाद्यहंकारनिवर्तिकाभ्यां
नमो नमः श्रीगुरुपादुकाभ्याम्।।

उद्घाटिताद्वैतमहेक्षणाभ्यां
निमीलितद्वैतविलोचनाभ्याम्।
मोहान्धकारेऽपि विरोचनाभ्यां
नमो नमः श्रीगुरुपादुकाभ्याम्।।

उद्धीर्णरागप्रतिरोधिकाभ्यां
विलीनबोधप्रतिबोधिकाभ्याम्।
अनादिमायामलवारिकाभ्यां
नमो नमः श्रीगुरुपादुकाभ्याम्।।

अम्बादिरौद्रचन्तमरीचिकाभ्यां
वर्णादिसर्वाध्वविवर्त्तिकाभ्याम्।
इच्छादिदेवीततचन्द्रिकाभ्यां
नमो नमः श्रीगुरुपादुकाभ्याम्।।

संसारदावानलघोरताप-
शान्त्यर्थपीयूषमहाह्रदाभ्याम्।
आप्यायितस्मर्तृ जनव्रजाभ्यां
नमो नमः श्रीगुरुपादुकाभ्याम्।।

समस्तविद्योदधिसारदाभ्यां
श्रीशारिकास्वान्तसुसेविताभ्याम्।
सच्छिष्यवृन्दैः परिपूजिताभ्यां
नमो नमः श्रीगुरुपादुकाभ्याम्।।

प्रभाप्रकाशार्थधृतव्रताभ्यां
तिरस्कृतानादिमनस्तमोभ्याम्।
मुक्तिप्रदाभ्यां विभवप्रदाभ्यां
नमो नमः श्रीगुरुपादुकाभ्याम्।।

दौर्भाग्यदावाग्निशिवाम्बुदाभ्यां
दूरीकृताशेषविपत्ततिभ्याम्।
कृपाकृतार्थीकृतमादृशाभ्यां
नमो नमः श्रीगुरुपादुकाभ्याम्।।

इमानि पद्यपुष्पाणि सदाह्लादकराण्यतः।
लभन्तां स्वीयसाफल्यं गुरुपूजामहोत्सवे।।

गुरुस्तुतिफलं वक्तुं शक्तः शेषोऽपि नो परम्।
स्वदन्ते स्तुतिकर्तारः फलं सद्यः परामृतम्।।

रामेश्वरेण विदुषा
भक्तिप्रेरितचेतसा।
श्रीगुरोर्लक्ष्मणस्यैषा
रचिता पादुकास्तुतिः।।

गौरीपतिं जगन्नाथं सर्वसंकटनाशिनम्।
स्वभक्तचामृतदातारं मुनीनां हितकारिणम्।।

समावेशरसास्वादपरमाह्लादचेतसाम्।
योगिनां हृदये नित्यं भासमानं चिदात्मकम्।।

गुरूणामपि सर्वेषां गुरुं चैकं जगद्गुरुम्।
नमाम्यहं महादेवं विश्वकल्याणकारिणम्।।

जयन्ति गुरुदेवानां पादपंकजपांसवः।
यत्संस्पर्शात्तरन्त्येते जनाः संसारसागरम्।।

यज्जन्मपूतां जगतीं विलोक्य
स्वसृष्टिसाफल्यमबोधि धाता।
नमाम्यहं तं गुरुमीश्वराख्यं
शिष्यान्समस्ताञ्छिवयन्तमेकम्।।

आशैशवाद्यो लभते समाधिं
योगीन्द्रनाथः स महाप्रभावः।
एतद्धि श्रुत्वा चकिता जनाः स्यु-
र्हृष्टाः पुनस्ते विदितप्रभावाः।।

समाधिलग्नं विषयैर्विमुक्तं
मनोऽस्य भोगेषु नियोजयन्तौ।
कृतप्रयत्नावनवाप्तकामौ
शिष्यत्वमेवाधिगतौ गुरू स्वौ।।

यथा पुरा तत्पितरौ न शेकतुः
सुतस्य बुद्धस्य मनो विचालितुम्।
महात्मनो धैर्यधनस्य योगिनो
विरागिणस्तत्त्वगवेषणोद्यतम्।।

महताबकाकोऽस्य गुरुर्गरीयान्
परमेष्ठिदेवोऽपि च रामदेवः।
रमणो महर्षिदृशि चागतोऽस्य
तमहं गुरुं नौमि गुरुक्रमस्थम्।।

श्री गुरुस्तुतिः

यस्य प्रसादान्न भयं न दुःखं
सद्यो भवत्येव सुखञ्च शांतिः।
नश्यन्ति विघ्नाः परमार्थमार्गे
तं रक्षितारं गुरुमानतोऽस्मि।।

गुरुप्रसादाच्च सुखी सदाहं
गुरुप्रसादाच्च सदा शिवोऽहम्।
तस्मात्सदा तस्य दयाभिकाङ्क्षी
तत्पादपद्मं हि सदाश्रयेऽहम्।।

नमाम्यहं श्रीगुरुपादुकाद्वयं
वदाम्यहं श्री गुरुदेवनाम।
करोम्यहं श्रीगुरुपादपूजनं
भजाम्यहं तं सततं शरण्यम्।।

भवन्तु सर्वे गुरुदेवशिष्या
धर्मप्रियाः पापपराङ्मुखाश्च।
दया सदास्मासु चकास्ति यस्य
नमाम्यहं तं गुरुवर्यमीशम्।।

जयति श्री गुरोरेष
प्रादुर्भावदिनोत्सवः।
समागता जना यस्मिन्
भवन्ति विमलाशयाः।।

देहस्थ देवताचक्रम्–

असुरसुरवृन्दवन्दितमभिमतवरवितरणे निरतम्।
दर्शनशताग्र्यपूज्यं प्राणतनुं गणपतिं वन्दे॥

वरवीरयोगिनीगणसिद्धावलिपूजितांघ्रियुगलम्।
अपहृतविनयिजनार्तिं वटुकमपानाभिधं वन्दे॥

आत्मीयविषयभोगैरिन्द्रियदेव्यः सदा हृदम्भोजे।
अभिपूजयन्ति यं तं चिन्मयमानन्दभैरवं वन्दे॥

यद्धीबलेन विश्वं भक्तानां शिवपथं भाति।
तमहमवधानरूपं सद्गुरुममलं सदा वन्दे॥

उदयावभासचर्वणलीलां विश्वस्य या करोत्यनिशम्।
आनन्दभैरवीं तां विमर्शरूपामहं वन्दे॥

अर्चयति भैरवं या निश्चयकुसुमैः सुरेशपत्रस्था।
प्रणमामि बुद्धिरूपां ब्रह्माणीं तामहं सततम्॥

कुरुते भैवरपूजामनलदलस्थाभिमानकुसुमैर्या।
नित्यमहंकृतिरूपां वन्दे तां शाम्भवीमम्बाम्॥

विदधाति भैरवार्चां दक्षिणदलगा विकल्पकुसुमैर्या।
नित्यं मनःस्वरूपां कौमारीं तामहं वन्दे॥

नैरृतदलगा भैरवमर्चयते शब्दकुसुमैर्या।
प्रणमामि श्रुतिरूपां नित्यं तां वैष्णवीं शक्तिम्॥

पश्चिमदिग्दलसंस्था हृदयहरैः स्पर्शकुसुमैर्या।
तोषयति भैरवं तां त्वग्रूपधरां नमामि वाराहीम्।।

वरतररूपविशेषैर्मारुतदिग्दलनिषण्णदेहा या।
पूजयति भैरवं तामिन्द्राणीं दृक्तनुं वन्दे।।

धनपतिकिसलयनिलया या नित्यं विविधषड्रसाहारैः।
पूजयति भैरवं तां जिह्वाभिख्यां नमामि चामुण्डाम्।।

ईशदलस्था भैरवमर्चयते परिमलैर्विचित्रैर्या।
प्रणमामि सर्वदा तां घ्राणाभिख्यां महालक्ष्मीम्।।

षड्दर्शनेषु पूज्यं षट्त्रिंशत्तत्त्वसंवलितम्।
आत्माभिख्यं सततं क्षेत्रपतिं सिद्धिदं वन्दे।।

संस्फुरदनुभवसारं सर्वान्तः सततसन्निहितम्।
नौमि सदोदितमित्थं निजदेहगदेवताचक्रम्।।

तव च काचन न स्तुतिरम्बिके
सकलशब्दमयी किल ते तनुः।
निखिलमूर्तिषु मे भवदन्वयो
मनसिजासु बहिष्प्रसरासु च।।

इति विचिन्त्य शिवे शमिताशिवे
जगति जातमयत्नवशादिदम्।
स्तुतिजपार्चनचिन्तनवर्जिता
न खलु काचन कालकलापि मे।।

ॐ श्री क्रमस्तोत्र

कौलार्णवानन्दघनोर्मिरूपा-
मुन्मेषमेषोभयभाजमन्तः।
निलीयते नीलकुलालये या
तां सृष्टिकालीं सततं नमामि।।

महाविनोदार्पितमातृचक्र-
वीरेन्द्रकासृग्रसपानसक्ताम्।
रक्तीकृतां च प्रलयात्यये तां
नमामि विश्वाकृतिरक्तकालीम्।।

वाजिद्वयस्वीकृतवातचक्रम्-
प्रक्रान्तसंघट्टगमागमस्थाम्।
शुचिर्ययास्तं गमितोऽर्चिषा तां
शान्तां नमामि स्थितिनाशकालीम्।।

सर्वार्थसंकर्षणसंयमस्य
यमस्य यन्तुर्जगतो यमाय।
वपुर्महाग्रासविलासरागात्
संकर्षयन्तीं प्रणमामि कालीम्।।

उन्मन्यनन्ता निखिलार्थगर्भा
या भावसंहारनिमेषमेति।
सदोदिता सत्युदयाय शून्यां
संहारकालीं मुदितां नमामि।।

ममेत्यहंकारकलाकलाप-
विस्फारहर्षोद्धतगर्वमृत्युः।
ग्रस्तो यया घस्मरसंविदं तां
नमामि कालोदितमृत्युकालीम्।।

विश्वं महाकल्पविरामकल्प-
भवान्तभीमभ्रकुटिभ्रमन्त्या।
याश्नात्यनन्तप्रभवार्चिषा तां
नमामि भद्रां शुभभद्रकालीम्।।

मार्तण्डमापीतपतंगचक्रं
पतंगवत्कालकलेन्धनाय।
करोति या विश्वरसान्तकां तां
मार्तण्डकालीं सततं प्रणौमि।।

अस्तोदितद्वादशभानुभाजि
यस्यां गता भर्गशिखा शिखेव।
प्रशान्तधाम्नि द्युतिनाशमेति
तां नौम्यनन्तां परमार्ककालीम्।।

कालक्रमाक्रान्तदिनेशचक्र-
क्रोड़ीकृतान्ताग्निकलाप उग्रः।
कालाग्निरुद्रो लयमेति यस्यां
तां नौमि कंलानलरुद्रकालीम्।।

नक्तं महाभूतलये श्मशाने
दिग्खेचरीचक्रगणेनसाकम्।
कालीं महाकालमलं ग्रसन्तीं
वन्दे ह्यचिन्त्यामनिलानलाभाम्।।

क्रमत्रयत्वाष्ट्रमरीचिचक्र-
सञ्चारचातुर्यतुरीयसत्ताम्।
वन्दे महाभैरवघोरचण्ड-
कालीं कलाकाशशशांककांतिम्।।

कालिकास्तोत्रम्

सिततरसंविदवाप्यं सदसत्कलनाविहीनमनुपाधि।
जयति जगत्त्रयरूपं नीरूपं देवि! ते रूपम्।।

एकमनेकाकारं प्रसृतजगद्व्याप्ति विकृतिपरिहीनम्।
जयति तवाद्वयरूपं विमलमलं चित्स्वरूपाख्यम्।।

जयति तवोच्छलदन्तः स्वच्छेच्छायाः स्वविग्रहग्रहणम्।
किमपि निरुत्तरसहजस्वरूपसंवित्प्रकाशमयम्।।

वान्त्वा समस्तकालं भूत्या झंकारघोरमूर्त्तिमपि।
निग्रहमस्मिन्कृत्वानुग्रहमपि कुर्वती जयसि।।

कालस्य कालि! देहं विभज्य मुनिपंचसंख्यया भिन्नम्।
स्वस्मिन्विराजमानं तद्रूपं कुर्वती जयसि।।

भैरवरूपी कालः सृजति जगत् कारणादिकीटान्तम्।
इच्छावशेन यस्याः सा त्वं भुवनाम्बिका जयसि।।

जयति शशांकदिवाकरपावकधामत्रयान्तरव्यापि।
जननि! तव किमपि विमलं स्वरूपरूपं परं धाम।।

एकं स्वरूपरूपं प्रसरस्थितिविलयभेदतस्त्रिविधम्।
प्रत्येकमुदयसंस्थितिलयविश्रमतश्चतुर्विधं तदपि।।

इति वसुपंचकसंख्यं विधाय सहजस्वरूपमात्मीयम्।
विश्वविवर्त्तावर्त्तप्रवर्तकं जयति ते रूपम्।।

सदसद्विभेदसूतेर्दलनपरा कापि सहजसंवित्तिः।
उदिता त्वमेव भगवति! जयसि जयाद्येन रूपेण।।

जयति समस्तचराचरविचित्रविश्वप्रपंचरचनोर्मि।
अमलस्वभावजलधौ शान्तं कान्तं च ते रूपम्।।

सहजोल्लासविकासप्रपूरिताशेषविश्वविभवैषा।
पूर्णा तवाम्ब! मूर्तिर्जयति परानन्दसंपूर्णा।।

कवलितसकलजगत्त्रयविकटमहाकालकवलनोद्युक्ता।
उपभुक्तभावविभवप्रभवापि कृशोदरी जयसि।।

रूपत्रयपरिवर्जितमसमं रूपत्रयान्तरव्यापि।
अनुभवरूपमरूपं जयति परं किमपि ते रूपम्।।

अव्ययमकुलममेयं विगलितसदसद्विवेककल्लोलम्।
जयति प्रकाशविभवस्फीतं काल्याः परं धाम।।

ऋतुमुनिसंख्यं रूपं विभज्य पंचप्रकारमेकैकम्।
दिव्यौघमुद्गिरन्ती जयति जगत्तारिणी जननी।।

भूदिग्गोखगदेवीचक्रलसज्ज्ञानविभवपरिपूर्णम्।
निरुपमविश्रांतिमयं श्रीपीठं जयति ते रूपम्।।

प्रलयलयान्तरभूमौ विलसितसदसत्प्रपंचपरिहीनाम्।
देवि! निरुत्तरतरां नौमि सदा सर्वतः प्रकटाम्।।

यादृङ् महाश्मशाने दृष्टं देव्याः स्वरूपमकुलस्थम्।
तादृग् जगत्त्रयमिदं भवतु तवाम्ब! प्रसादेन।।

इत्थं स्वरूपस्तुतिरभ्यधायि
सम्यक्समावेशदशावशेन।
मया शिवेनास्तु शिवाय सम्यङ्
ममैव विश्वस्य तु मंगलाय।।

अमृतेश्वर भैरवस्तुतिः

लिंगेऽत्र भक्त दयया क्षणमात्रमेकं
स्थानं व्यधाय भव मद्विहितं पुरारे!
सर्वेश! विश्वमय! हृत्कमलाधिरूढः
पूजां गृहाण भगवन्! भव मेऽद्य तुष्टः।।

भूमेर्जलात्तु पवनादनलाद् हिमांशोः
उष्णांशुतो हृदयतो गगनात् समेत्य।
लिंगेऽत्र सन्मणिमये मदनुग्रहार्थं
भक्त्यैकलभ्य! भगवन्! कुरु सन्निधानम्।।

त्वं सर्वगोऽसि भगवन् किल यद्यपि त्वां
आवाह्यामि यथा व्यजनेन वायुम्।
गूढ़ो यथैव दहनो मथनादुपैति
आवाहितोऽसि तथा त्वमपैषि चार्चाम्।।

मालाधराच्युत विभो परमार्थमूर्ते
सर्वज्ञ सर्वकरणादि शुभ स्वभावे।
लिंगेऽत्र सन्मणिमये मदनुग्रहार्थं
भक्त्यैकलभ्य! भगवन्! कुरु सन्निधानम्।।

भगवन्! पार्वतीनाथ! भक्तानुग्रहकारक!
अस्मद्दयानुरोधेन सन्निधानं कुरु प्रभो! ।।

ॐ जुं सः अमृतेश्वरभैरवाय नमः।।१०

अन्तरालीनतत्त्वौघं चिदानन्दघनं महत्।
यत्तत्त्वं शैवधामाख्यं तदोमित्यभिधीयते।।

तादृगात्मपरामर्शशालिनी शक्तिरस्य या।
देशकालापरिच्छिन्ना सा जुंशब्देनकथ्यते।।

सिसृक्षोल्लेखनिर्माणशक्तित्रितयनिर्भरा।
जगतो येशिताशक्तिः सा स इत्युच्यते स्फुटम्।।

स्वशक्त्यभिव्यक्तिमये मोक्षेऽस्यैश्वर्ययोगतः।
स्वोपासकानाममृतेश्वरत्वं तस्य सुस्फुटम्।।

नीलहर्षादिभेदेन यद्बाह्याभ्यन्तरं जगत्।
अहमित्यामृशन्पूर्णो भैरवः समुदाहृतः।।

देहप्राणसुखादीनां न्यग्भावाद्भक्तसंहतेः।
या चिदात्मनि विश्रान्तिर्नमःशब्देन सोच्यते।।

त्रयी सप्तचतुर्युग्ममये त्रितयवर्त्मनि।
स्थितो यः शक्तिसहितः स जयत्यमृतेश्वरः।।१०२।।

आत्मेन्दुधामनि युगेशनरेशपुत्र-
चित्रां त्रिशूलबिलधामनि सृष्टशक्तिम्।
वैसर्गिके चितिपदेऽप्यथपुण्डरीकां
काञ्चित्परां त्रिकपरां प्रणमामि देवीम्।।

श्रीमत्सदाशिवपदेऽपि महोग्रकाली
भीमोत्कटभ्रुकुटिरेष्यति भंगभूमिः।
इत्याकलय्य परमां स्थितिमेत्य काल-
संकर्षिणीं भगवतीं हठतोऽधितिष्ठेत्।।

तन्मध्ये तु परादेवी दक्षिणे च परापरा
अपरा वामश्रृंगे तु मध्यश्रृंगोर्ध्वतः श्रृणु।
या सा संकर्षिणी काली परातीता व्यवस्थिता।।

कृत्वाधारधरां चमत्कृतिरसप्रोक्षाक्षणक्षालिता-
मात्तैर्मानसतः स्वभावकुसुमैः स्वामोदसंदोहिभिः।
आनन्दामृतनिर्भरस्वहृदयानर्घार्घपात्रक्रमात्
त्वां देव्या सह देहदेवसदने देवार्चयेऽहर्निशम्।।

नानास्वादरसामिमां त्रिजगतीं हृच्चक्रयन्त्रार्पिता-
मूर्ध्वाधस्तविवेकगौरवभरान्निष्पीड्यनिःष्यन्दितम्।
यत्संवित्परमामृतं मृतिजराजन्मापहं जृम्भते
तेन त्वां हविषा परेण परमे संतर्पयेऽहर्निशम्।।

कालाग्निरुद्रात्प्रसृतं च तेजो
भूरि स्फुटं दीप्ततरं विचिन्त्यम्।
ऊर्ध्वे स्थिता चन्द्रकला च शान्ता
पूर्णामृतानन्दरसेन देवि।।

तदोभयोर्वह्निविषानुयोगात्
तेजश्शशांकौ द्रवितौ च यस्मात्।
तेजश्शशांकस्फुटमिश्रितत्वाद्
भवेत् तदार्कं त्ववतार रूपम्।।

परस्परसमाविष्टौ चन्द्रेऽग्नीष्टीटिभे शशी
चन्द्रं सृष्टिं विजानीयादग्निःसंहार उच्यते।
अवतारो रवि प्रोक्तो मध्यस्थः परमेश्वरः।।

ततः सकाशात्प्रभवाप्ययौ स्तो
यस्मादयं विश्वसमग्रभेदः।
एतच्च विद्वान् विदितार्थभावो
ध्यायेत युक्त्यात्मचिदर्करूपम्।।

द्वारेशा नवरन्ध्रगा हृदयगो वास्तुर्गणेशो महान
शब्दाद्या गुरवः समीरदशकं त्वाधारशक्त्यात्मकम्।
चिद्देवोऽथ विमर्शशक्तिसहितः षाड्गुण्यमंगावलि-
र्लोकेशाः करणानि यस्य महिमा तं नेत्रनाथं स्तुमः।।

विगलति भवदौर्गत्यं मोक्षश्री श्रयति हृत्कजं कचति।
प्रसरति परमानन्दो यत्र तदीशार्चनं जयति।।

ओमिति स्फुरदुरस्यनाहतं गर्भगुम्फितसमस्तवाङ्मयम्।
दन्ध्वनीति हृदि यत्परं पदं तत्सदक्षरमुपास्महे महः।।

भानुना तुहिनभानुना बृहद्भानुना च विनिवर्तितं न यत्।
येन तज्झगिति शान्तिमान्तरं ध्वान्तमेति तदुपास्महे महः।।

तर्ककर्कशगिरामगोचरं स्वानुभूतिसमयैकसाक्षिणम्।
मीलिताखिलविकल्पविप्लवं पारमेश्वरमुपास्महे महः।।

पद्मसद्मकरमर्दलालितं पद्मनाभनयनाब्जपूजितम्।
पद्मबन्धुमुकुटांशुरञ्जितं पादपद्मयुगमैश्वरं स्तुमः।।

यदि हरोऽसि तदा हर दुष्कृतं यदि भवोऽसि तदा भव भूतये।
यदि शिवोऽसि तदा कुरु मे शुभं शमय दुःखमिदं यदि शंकरः।।

शरणं तरुणेन्दुशेखरः शरणं मे गिरिराजकन्यका।
शरणं पुनरेव तावुभौ शरणं नान्यदुपैमि दैवतम्।।

सदुपायकथास्वपण्डितो हृदये दुःखशरेण खण्डितः।
शशिखण्डशिखण्डमण्डनं शरणं यामि शरण्यमीश्वरम्।।

महेश्वरे वा जगतामधीश्वरे जनार्दने वा जगदन्तरात्मनि।
न कापि भेदप्रतिपत्तिरस्ति मे तथापि भक्तिस्तरुणेन्दुशेखरे।।

संग्रहेण सुखदुःखलक्षणं मां प्रति स्थितमिदं श्रृणु प्रभो।
सौख्यमेष भवता समागमः स्वामिना विरह एव दुःखिता।।

दासधाम्नि विनियोजितोऽप्यहं स्वेच्छयैव परमेश्वर त्वया।
दर्शनेन न किमस्मि पात्रितः पादसंवहनकर्मणापि वा।।

शक्तिपातसमये विचारणं प्राप्तमीश न करोषि कर्हिचित।
अद्य मां प्रति किमागतं यतः स्वप्रकाशनविधौ विलम्बसे।।

त्वामगाधम विकल्पमद्वयं स्वं स्वरूपमखिलार्थघस्मरम्।
आविशन्नहमुमेश सर्वदा पूजयेयमभिसंस्तुवीय च।।

क्लेशान्विनाशय विकासय हृत्सरोज-
मोजोविजृम्भय निजं नरिनर्तयांगम्।
चेतश्चकोरचिति चन्द्र मरीचि चक्रं
आचम्य सम्यगमृतीकुरु विश्वमेतत्।।

भवन्मय स्वात्मनिवास लब्ध सम्पद्भराभ्यर्चित युष्मदंघ्रिः।
न भोजनाच्छादनमप्यजस्रमपेक्षते यस्तमहं नमामि।।

भ्रान्तोऽस्मि वैशसमये समयेऽहमत्र
मिथ्यैव दिग्भ्रमहतो महतोऽपमार्गात्।
विश्रम्य नन्दनवने नवने शिवस्य
खेदस्तु संप्रति समेति समेऽवसानम्।।

यस्योन्मेषनिमेषाभ्यां जगतः प्रलयोदयौ।
तं शक्तिचक्रविभव प्रभवं शंकरं स्तुमः।।

नमः शिवाय सततं पञ्चकृत्यविधायिने।
चिदानन्दघन स्वात्म परमार्थावभासिने।।

अस्मद्रूप समाविष्टः स्वात्मनात्म निवारणे।
शिवः करोतु निजया नमः शक्त्या ततात्मने।।

यं प्राप्य सर्वागम सिन्धु संगाः पूर्णत्वमभ्येति कृतार्थतां च।
तं नौम्यहं शाम्भव तत्त्वचिन्तारत्नौघसारं परमागमाब्धिम्।।

ते पंकमंकगतमात्मनि धावयन्ति
दिङ्मण्डलं च परितः परिपावयन्ति।
क्लेशान्क्षणात्तृणगणानिव लावयन्ति
ये त्वां प्रकाशवपुषं हृदि भावयन्ति।।

परं परस्थं गहनादनादिं एकं निविष्ठं बहुधा गुहासु।
सर्वालयं सर्व चराचरस्थं त्वामेव शम्भुं शरणं प्रपद्ये।।

त्वद्वपुः स्मृतिसुधारसपूर्णे मानसे तव पदाम्बुजयुग्मम्।
मामके विकसदस्तु सदैव प्रस्रवन्मधु किमप्यतिलोकम्।।

सततमेव भवच्चरणाम्बुजा कर चरस्य हि हंसवरस्य मे।
उपरि मूलतलादपि चान्तरात् उपनमत्वज भक्तिमृणालिका।।

विकसतु स्व वपुर्भवदात्मकं समुपयान्तु जगन्ति ममांगताम्।
व्रजतु सर्वमिदं द्वयवल्गितं स्मृतिपथोपगमेऽप्यनुपाख्यताम्।।

उद्धरत्यन्धतमसात् विश्वमानन्दवर्षिणी।
परिपूर्णा जयत्येका देवी चिच्चन्द्रचन्द्रिका।।

आश्यानं चिद्रसस्यौघं साकारत्वमुपागतम्।
जगद् रूपतया वन्दे प्रत्यक्षं भैरवं वपुः।।

भीरूणामभयप्रदो भवभयाक्रन्दस्य हेतुस्ततो
हृद्धाम्नि प्रथितश्च भीरवरुचामीशो' न्तक स्यान्तकः।
भेरं वायति यः सुयोगिनिवहस्तस्य प्रभुर्भैरवो।
विश्वस्मिन्भरणादिकृत् विजयते विज्ञानरूपः परः।।

देव प्रसीद यावन्मे त्वन्मार्गपरिपन्थिकाः।
परमार्थमुषो वश्या भवेयुः गुणतस्कराः।।

कदा कामपि तां नाथ तव वल्लभतामियाम्।
यथा मां प्रति न क्वापि युक्तं ते स्यात्पलायितुम्।।

क्रमेण कर्मणा केन 'कया वा प्रज्ञया प्रभो।
ज्ञेयो'सीत्युपदेशेन प्रसादः क्रियतां मयि।।

किमशक्तः करोमीति सर्वत्रानध्यवस्यतः।
सर्वानुग्राहिका शक्तिः शांकरी शरणं मम।।

क्षमः कां नापदं हन्तुं कां दातुं संपदं न वा।
योऽसौ स दयितोऽस्माकं देवदेवो वृषध्वजः।।

अभिनवोत्पल सौरभ संस्कृतं रसयतः शिवदृष्टि रसायनम्।
इह सदैव सदैव निरामयं हृदयमस्तु मम प्रतिभामयम्।।

यो विचित्ररस सेक वर्धितः
शंकरेति शतशोऽप्युदीरितः।
शब्द आविशति तिर्यगाशयेष्व-
प्ययं नवनव प्रयोजनः।।

ते जयन्ति मुखमण्डले भ्रमन्
अस्ति येषु नियतं शिवध्वनिः।
यः शशीव प्रसृतोऽमृताशयात्
स्वादु संस्रवति चामृतं परम्।।

अस्तंगतवति प्राणे त्वपानेऽभ्युदयोन्मुखे।
तावत् सा कुम्भकावस्था योगिभिरनुभूयते।।

यथा निमीलने काले प्रपञ्चो नैव दृश्यते।
तथैवोन्मीलने स्याच्चेदेतद्ध्यानस्य लक्षणम्।।

प्रकाशमाने परमार्थभानौ
नश्यत्यविद्यातिमिरे समस्ते।
तदा बुधा निर्मलदृष्टयोऽपि
किञ्चिन्न पश्यन्ति भवप्रपञ्चम्।।

प्रनष्टवायुसंचारः पाषाण इव निश्चलः।
परजीवैक्यधर्मज्ञो योगी योगविदुच्यते।।

सोऽहं सोऽहं
सोऽहं शिवोऽहं
सोऽहं शिवोऽहं
सोऽहं शिवोऽहं
आइ एम नॉट दिस बॉडी, दिस बॉडी इज़ नॉट माइन!
आइ एम नॉट दिस बॉडी, दिस बॉडी इज़ नॉट माइन!
सोऽहं सोऽहं
सोऽहं शिवोऽहं
सोऽहं शिवोऽहं
सोऽहं शिवोऽहं

आइ एम नॉट दिस माइण्ड, दिस माइण्ड इज़ नॉट माइन!
आइ एम नॉट दिस माइण्ड, दिस माइण्ड इज़ नॉट माइन!

सोऽहं सोऽहं
सोऽहं शिवोऽहं
सोऽहं शिवोऽहं
सोऽहं शिवोऽहं
आइ एम नॉट दिस ईगो, दिस ईगो इज़ नॉट माइन!
आइ एम नॉट दिस ईगो, दिस ईगो इज़ नॉट माइन!
सोऽहं सोऽहं
सोऽहं शिवोऽहं
सोऽहं शिवोऽहं
सोऽहं शिवोऽहं

ॐ नमः शिवाय
ॐ नमः शिवाय
ॐ नमः शिवाय
ॐ नमः शिवाय

सोऽहं सोऽहं
सोऽहं शिवोऽहं
सोऽहं शिवोऽहं
सोऽहं शिवोऽहं

सोऽहं सोऽहं
सोऽहं शिवोऽहं
सोऽहं शिवोऽहं
सोऽहं शिवोऽहं

सोऽहं सोऽहं
सोऽहं शिवोऽहं
सोऽहं शिवोऽहं
सोऽहं शिवोऽहं

सोऽहं सोऽहं
सोऽहं शिवोऽहं
सोऽहं शिवोऽहं
सोऽहं शिवोऽहं।।

सहस्रशीर्षा पुरुषः पुनातु वः
सहस्रचक्षुर्भगवान् सहस्रपात्।
गलेऽङ्घ्रिमूले नयने च निश्चला-
स्त्रयोऽप्यमी यं पुरुषा उपासते।।

स्वैरेव यद्यपि गतोऽहमधः कुकृत्यै-
स्तत्रापि नाथ तव नास्म्यवलेपपात्रम्।
दृप्तः पशुः पतति यः स्वयमन्धकूपे
नोपेक्षते तमतिकारुणिको हि लोकः।।

मानुष्य नाव मधिगम्य चिरादवाप्य
निस्तारकंच करुणाभरणं भवन्तम्।
यस्याभवद् भरवशस्तरितुं भवाब्धिं
सोऽहं ब्रुडामि यदि कस्य विडम्बनेयम्।।

मोहः शान्तो गुरुवरमुखाम्नाय तत्त्वोपलम्भात्
मग्नं चेतः समरससमास्वादलोलं चिदब्धौ।
भावव्रातः प्रशममगमन्निर्विकल्पे समाधौ
सिद्धाभासः स भवतु हि मे कोपि संविद्विकासः।।

श्रीरामः शरणं समस्त जगतां
रामं नमामीश्वरं
रामेण रचितं त्रिलोकमरिवलं
रामाय तस्मै नमः।
रामात् सर्वमिदं जगत् समुदितं
रामस्य दासोऽस्म्यहं
रामे मे रतिरस्तु राम! नहिमां
मोक्तुं भवानर्हति।।

रामो राजमणिः सदा विजयते
रामं रमेशं भजे।
रामेण निहिता निशाचर चमूः
रामाय तस्मै नमः।
रामात् नास्ति परायणं परतरं
रामस्य दासोऽस्म्यहं
रामे चित्तलयः सदाभवतु मे
भो राम! मामुद्धर।।

रामनामजपतां कुतो भयं सर्वतापशमनैकभेषज़म्।
पश्य तात मम गात्रसन्निधौ पावकोऽपि सलिलायतेऽधुना।।

वामे भूमिसुता पुरश्च हनुमान् पश्चात् सुमित्रासुतः
शत्रुघ्नो भरतश्च पार्श्वदलयोर्वाय्वादिकोणेषु च।
सुग्रीवश्च विभीषणश्च युवराट् तारासुतो जाम्बवान्
मध्ये नीलसरोजकोमलरुचिं रामं भजे श्यामलम्।।

क्षालयामि तव पाद पंकजं नाथ दारुदृषदोः किमन्तरम्।
मानुषीकरणचूर्णमस्ति ते पादयोरिति कथा प्रथीयसी।।

आञ्जनेयमतिपाटलाननं काञ्चनाद्रिकमनीयविग्रहम्।
पारिजाततरुमूलवासिनं भावयामि पवमाननन्दनम्।।

यत्र यत्र रघुनाथकीर्तनं तत्र तत्र कृतमस्तकाञ्जलिम्।
वाष्पवारिपरिपूर्णलोचनं मारुतिं नमत राक्षसान्तकम्।।

उल्लंघ्य सिन्धोः सलिलं सलीलं।
यः शोकवह्निं जनकात्मजायाः।
आदाय तेनैव ददाह लंकां
नमामि तंप्रांजलिरांजनेयम्।।

मनोजवं मारुत तुल्य वेगं
जितेन्द्रियं बुद्धिमतां वरिष्ठम्।
वातात्मजं वानरयूथमुख्यं
श्रीरामदूतं शरणं प्रपद्ये।।

अभिनवरूपाशक्तिः तद्गुप्तो यो महेश्वरो देवः।
तदुभय यामलरूपमभिनवगुप्तं शिवम् वन्दे।।

अगाध संशयाम्भोधि समुत्तरण तारिणीम्।
वंदे विचित्रार्थपदां चित्रांतां गुरुभारतीम्।।

अदृष्टविग्रहागतं मरीचिचक्रविस्तरम्।
अनुग्रहैककारणं नमाम्यहं गुरुक्रमम्।।

ॐ अमृतेश्वरभैरवं स्वच्छन्दनाथं
श्रीकण्ठनाथं ऋषि दुर्वाससम्।
मानस पुत्रं त्र्यम्बकनाथं
आमर्दकनाथं श्रीनाथम्।।

मानसपुत्रीं अर्धत्र्यम्बकाख्यां
त्र्यम्बकादित्यम्।
संगमादित्यं वर्षादित्यमरुणादित्यम्।।

आनन्दं सोमानन्दं उत्पलदेवं
आचार्यवरं श्रीशम्भुनाथम्।
लक्ष्मण गुप्तमभिनवगुप्तं
क्षेमराजं योगराजं च।।

श्रीगुरु मनकाकं
शैवाचार्यं रामं
तत् शिष्यं श्रीमहताबकाकम्।
गुरुसन्तति रूपे अवतारितं
शैवं शम्भु ईश्वरस्वरूपं च।।

भैरवं रुद्रं शिवतन्त्रं आलयं करुणालयम्।
नमामि भगवत् पादं शंकरं लोकशंकरम्।।

शंकरं शंकराचार्यं महान्तमभिनवगुप्तम्।
शैव शंकर अवतारितं ईश्वरस्वरूपं पुनः पुनः नमामि।।

पर भैरव लीनां तच्छिष्यां श्री शारिकादेवीं च सदा नमामि।

शारिकां सुभगाकारां शांतां सर्वजनप्रियां।
नैष्ठिकां स्वगुरोः हृत्स्थां सन्ततं तां स्मराम्यहम्।।

श्रीमत्यै ब्रह्म वादिन्यै देह वत्यै गिरे पुनः।
दयाद्र शारिका देव्यै कृत्या वाचा हृदानमः।।

ॐ परभैरव लीनीभूता
आत्मशक्तिः श्रीशारिकादेवी।
ॐ परभैरवलीन्यै पराशक्त्यै
श्री शारिका देव्यै नमोनमः।। १०८।।

हे हरे-हे हरे-हे हरे-हे हरे।
शारिके-शारिके-शारिके नमोऽस्तुते।।
शारिके-शारिके-शारिके नमोऽस्तुते।
शारिके-शारिके-शारिके नमोऽस्तुते।।
त्वमेवहि महाराज्ञी शारिके-शारिके।
शारिके-शारिके-शारिके नमोऽस्तुते।।
त्वमेवहि महालक्ष्मी शारिके-शारिके।
शारिके-शारिके-शारिके नमोऽस्तुते।।
त्वमेवहि ज्वालामुखी शारिके-शारिके।
शारिके-शारिके-शारिके नमोऽस्तुते।।
त्वमेवहि शिवादेवी शारिके-शारिके।
शारिके-शारिके-शारिके नमोऽस्तुते।।
त्वमेवहि सरस्वती शारिके-शारिके।
शारिके-शारिके-शारिके नमोऽस्तुते।।
त्वमेवहि महादेवी शारिके-शारिके।
शारिके-शारिके-शारिके नमोऽस्तुते।।
त्वमेवहि त्रिपुरसुन्दरी शारिके-शारिके।
शारिके-शारिके-शारिके नमोऽस्तुते।।
हे स्वयं पार्वती शारिके-शारिके।
शारिके-शारिके-शारिके नमोऽस्तुते।।
अग्रतः पृष्ठतः उत्तरतः दक्षिणतः।
शारिके-शारिके-शारिके नमोऽस्तुते।।
ईश्वर स्वरूपस्य सर्वस्वशारिके।
शारिके-शारिके-शारिके नमोऽस्तुते।।

ब्रह्मवादिनी शारिका जी

वि.सं. 1974
मार्गशीर्ष कृष्ण पक्ष द्वितीया

वि. सं. 2048
फाल्गुन कृष्ण पक्ष द्वितीया

शं नो मित्रः शं वरुणः शं नो भव त्वर्यमा
शं न इन्द्रो बृहस्पतिः शं नो विष्णुरुरुर्क्रमः।।
नमो ब्रह्मणे नमस्ते वायो
त्वमेव प्रत्यक्षं ब्रह्म वदिष्यामि।
त्वामेव प्रत्यक्षं ब्रह्म वदिष्यामि।
ऋतं वदिष्यामि
सत्यं वदिष्यामि
तन्मामवतु
तदवक्तारमवतु
आवतु माम् अवतु
वक्तारं शांतिः शांतिः शांतिः।।

शं नो मित्रः शं वरुणः शं नो भव त्वर्यमा
शं न इन्द्रो बृहस्पतिः शं नो विष्णुरुरुक्रमः।।
नमो ब्रह्मणे नमस्ते वायो
त्वमेव प्रत्यक्षं ब्रह्मासि।
त्वामेव प्रत्यक्षं ब्रह्म अवादिषम्
ऋतं अवादिषम्, सत्यमवादिषम्
तन्मामावेत् तद्वक्तारमावेत्
आवेत् मामावेत् वक्तारं
शांतिः शांतिः शांतिः।।

सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चित् दुःख भाक् जनः।।

नन्दन्तु साधकाः सर्वे विनश्यन्तु विदूषकाः।
अवस्था शाम्भवी मेऽस्तु प्रसन्नोऽस्तु गुरुः सदा।।

राजस्वस्ति प्रजास्वस्ति देशस्वस्ति तथैव च।
यजमानगृहे स्वस्ति स्वस्ति गो ब्राह्मणेषुच।।

ऊनाधिकमविज्ञातं पौर्वापर्यविवर्जितम्।
यच्चावधानरहितं बुद्धेर्विस्खलितं च यत्।।

तत्सर्वं मम सर्वेश! भक्तस्यार्तस्यदुर्मतेः।
क्षन्तव्यं कृपया शंभो! यतस्त्वं करुणापरः।।

''अन्तरालीन तत्त्वौघं'' का शेष भाग–

ब्रह्मविष्णुमहेशादिदेवता भूतजातयः।
नाशमेवानुधावन्ति तस्माच्छ्रेयः समभ्यस्येत्।।

अज्ञो जन्तुरनीशोऽयमात्मनः सुखदुःखयोः।
ईश्वरप्रेरितो गच्छेत्-श्वभ्रं वा स्वर्गमेव वा।।

यावन्नैव प्रविशति चरन्मारुतो मध्यमार्गे
यावद्बिन्दुर्न भवति दृढं प्राणवात्प्रबन्धात्।
यावन्नैव सहजसदृशं जायते चैव तत्त्वम्।
तावत्सर्वं तदिदमखिलं दम्भमिथ्याप्रलापम्।।

आश्यानं चिद्रसस्यौघं साकारत्वमुपागतम्।
जगद्रूपतया वन्दे प्रत्यक्षं भैरवं वपुः।।

उज्झित्वात्मसमाधानं ये ध्यायन्त्यन्यदेवताः।
भिक्षन्ते भूरिवित्तास्ते भिक्षित्वापि बुभुक्षिताः।।

अवस्थाभेदप्रक्रिया

जाग्रत्स्वप्नसुषुप्तान्यतदतीतानि यान्यपि।
तान्यप्यमुष्यनाथस्य स्वातन्त्र्यलहरीभरः।।

प्रमातृभेदप्रक्रिया

महामन्त्रेशमन्त्रेशमन्त्राः शिवपुरोगमाः।
अकलौ सकलश्चेति शिवस्यैव विभूतयः।।

अध्वभेदप्रक्रिया

बहुशक्तितत्वमस्योक्तं शिवस्य यदतो महान्।
कलातत्त्वपुरार्णाणुः पदादिर्भेदविस्तरः।।

कदाचिद्भक्तियोगेन कर्मणा विद्ययापि वा
ज्ञानधर्मोपदेशेनमन्त्रैर्वा दीक्षयापि वा।
एवमाद्यैरनेकैश्च प्रकारैः परमेश्वरः
संसारिणोऽनुगृह्णाति विश्वस्य जगतः पतिः।।

कृत्यभेदप्रक्रिया

सृष्टिस्थितितिरोधान-
संहारानुग्रहादि च।
तुर्यमित्यपि देवस्य
बहुशक्तित्वजृम्भितम्।।

तस्य शक्तय एवैतास्तिस्रो भान्ति परादिकाः।
सृष्टौ स्थितौ लये तुर्ये तेनैताः द्वादशोदिताः।।

क्रमाभावान्न युगपत्तदभावात्क्रमोऽपि न।
क्रमाक्रमकथातीतं, संवित्तत्त्वं सुनिर्मलम्।।

अदीक्षितानां पुरतो नोच्चरेत् शिवसंहिताम्।
तमाराध्य ततस्तुष्टाद्दीक्षामासाध्य शांकरीम्।
येन केनाप्युपायेन गुरुमाराध्य भक्तितः।
तद्दीक्षाक्रमयोगेन शास्त्रार्थं वेत्त्यसौ ततः।।

अभिषेकं समासाध्य यो भवेत् स तु कल्पितः।
सन्नप्यशेषपाशौघविनिवर्तनकोविदः।।

संसारमोहनाशाय शब्दबोधो न हि क्षमः।
न निवर्तेत तिमिरं कदाचिद्दीपवार्तया।।

अभ्यस्य वेदशास्त्राणि सारं ज्ञात्वाथ बुद्धिमान्।
पलालमिव धान्यार्थी त्यजेच्छास्त्रमशेषतः।।

षड्दर्शनमहाकूपे पतिताः पशवः प्रिये! ।
न जानन्ति परंतत्त्वं दर्वी पाकरसं यथा।।

यदा तु वैचित्र्यवशाज्जानीयात्तस्य तादृशं
विपरीतप्रवृत्तित्वं ज्ञानं तस्मादुपाहरेत्।
तं च त्यजेत्पापवृत्तिं भवेत्तु ज्ञानतत्परः।।

यदा किंचिद्ज्ञोऽहं द्विप इव मदान्धः समभवं
तदा सर्वज्ञोऽस्मीत्यभवदवलिप्तं मम मनः।
यदा किंचित्किंचिद्बुधजनसकाशादवगतं
तदा मूर्खोऽस्मीति ज्वर इव मदो मे व्यपगतः।।

शासनरोधनपालनपाचनयोगात्स सर्वमुपकुरुते।
तेन पतिः श्रेयोमय एव शिवो नाशिवं किमपि तत्र।।

ईदृग्रूपं कियदपि रुद्रोपेन्द्रादिषु स्फुरेद्येन।
तेनावच्छेदनुदे परममहत्पदविशेषणमुपात्तम्।।

देवो ह्यन्वर्थशास्त्रोक्तैः शब्दैः समुपदिश्यते।
महाभैरवदेवोऽयं पतिर्यः परमः शिवः।।

विश्वं बिभर्ति पूरणधारणयोगेन तेन च भ्रियते।
सविमर्शतया स्वरूपतश्च संसारभीरुहितकृच्च।।

संसारभीतिजनिताद्रवात्परामर्शतोऽपि हृदि जातः।
प्रकटीभूतं भवभयविमर्शनं शक्तिपाततो येन।।

नक्षत्रप्रेरककालतत्त्वसंशोषकारिणो ये च।
कालग्राससमाधानरसिकमनःसु तेषु च प्रकटः।।

संकोचिपशुजनभिये यासां रवणं स्वकरणदेवीनाम्।
अन्तर्बहिश्चतुर्विधखेचर्यादिकगणस्यापि।।

तस्य स्वामी संसारवृत्तिविघट्टनमहाभीमः।
भैरव इति गुरुभिरिमैरन्वर्थैः संस्तुतः शास्त्रे।।

दृष्ट्वा शिष्यं जराग्रस्तं व्याधिभिः परिपीडितम्।
उत्क्रमय्य ततस्त्वेनं परतत्त्वे नियोजयेत्।।

सर्वमप्यथवा भोगं मन्यमानो विरूपकम्।
उत्क्रमय्य ततस्त्वेनं परतत्त्वे नियोजयेत्।।

तामाश्रित्योर्ध्वमार्गेण चन्द्रसूर्यावुभावपि।
सौषुम्णयध्वन्यस्तमितो हित्त्वा ब्रह्माण्डगोचरम्।।

तदा तस्मिन्महाव्योम्नि प्रलीनशशिभास्करे।
सौषुप्तपदवन्मूढः प्रबुद्धः स्यादनावृतः।।

यामवस्थां समालम्ब्य यदयं मम वक्ष्यति।
तदवश्यं करिष्येऽहमिति संकल्प्य तिष्ठति।।

यत्रोपरमते चित्तं निरुद्धं योगसेवनात्।
यत्र चैवात्मनात्मानं पश्यन्नात्मनि तुष्यति।।

सुखमात्यन्तिकं यत्तद्बुद्धिग्राह्यमतीन्द्रियम्।
वेत्ति यत्र न चैवायं स्थितश्चलति तत्त्वतः।।

यं लब्ध्वा चापरं लाभं मन्यते नाधिकं ततः।
यस्मिन् स्थितो न दुःखेन गुरुणापि विचाल्यते।।

तं विद्याद्दुःखसंयोगवियोगं योगसंज्ञितम्।
स निश्चयेन योक्तव्यो योगो निर्विणचेतसा।।

प्रशान्तमनसं ह्येनं योगिनं सुखमुत्तमम्।
उपैति शान्तरजसं ब्रह्मभूतमकल्मषम्।।

युञ्जन्नेवं सदात्मानं योगी नियतमानसः।
सुखेन ब्रह्मसंयोगमत्यन्तमधिगच्छति।।

विघ्नायुतसहस्रं तु परोत्साहसमन्वितम्
प्रहरत्यनिशं जन्तोः सद्वस्त्वभिमुखस्य च।
विशेषतो भवाम्बोधिसमुत्तरणकारिणः।।
रामः किमुच्यते देव! योऽत्रस्थः स च कः प्रभो!
तस्याभ्यासः कथं नाम ब्रूहि मे परमेश्वर।।

(इतिप्रश्नग्रन्थः)

(अत्रोत्तरग्रन्थः)

गतिः स्थानं स्वप्नजाग्रदुन्मेषणनिमेषणे !
धावनं प्लवनं चैव आयासः शक्तिवेदनम्।।

बुद्धिभेदास्तथाभावाः संज्ञाकर्मान्यनेकशः।
एतच्चतुर्दशविधं रामं तु परिकीर्तितम्।।

ऊर्ध्वं त्यक्त्वाधोविशेत् स रामस्थो मध्यदेशगः।।

न मोक्षो नभसः पृष्ठे न पाताले न भूतले।
सर्वाशासंक्षये चेतः क्षयो मोक्ष इतीर्यते।।

(इति वेदान्ते)

मोक्षस्य नैव किञ्चिद् धामास्ति न चापि गमनमन्यत्र।
अज्ञानग्रन्थिभिदा स्वशक्त्यभिव्यक्तता मोक्षः।।

(इति त्रिकागमे)

मोक्षो हि नाम नैवान्यः स्वरूपप्रथनं हि सः
स्वरूपं चात्मनः संविन्नान्यत्तत्र तु या पुनः।
क्रियादिकाः शक्तयस्ताः संविद्रूपाधिकाः नहि
असंविद्रूपतायोगाद्धर्मिणश्चानिरूपणात्।।

(युगलकम्)

पारमेश्वरशास्त्रे च न च काणाददृष्टिवत्।
शक्तीनां धर्मरूपाणामाश्रयः कोपि कथ्यते।।

एक एव मनोदेवो जितः सर्वार्थसिद्धिदः।
अन्यश्च विफलः क्लेशः सर्वेषां तज्जयं विना।।

सोऽपि स्वातन्त्र्यधाम्ना चेदप्यनिर्मलसंविदाम्।
अनुग्रहं चिकीर्षुस्तद्भाविनं विधिमाश्रयेत्।।

तदर्थमेव चास्यापि परमेश्वररूपिणः।
तदभ्युपायशास्त्रादिश्रवणाध्ययनादरः।।

नहि तस्य स्वतन्त्रस्य क्वापि कुत्रापि खण्डना।
ननिर्मलचित्तःपुंसोऽनुग्रहस्त्वनुपायकः।।

अयं रसो येन मनागवाप्तः स्वच्छन्दचेष्टानिरतस्य तस्य।
समाधियोगव्रतमन्त्रमुद्राजपादिचर्याविषवद्विभाति।।

तत्त्वमात्मस्थमज्ञात्वा मूढः शास्त्रेषु मुह्यते।
गोपः कुक्षिगतं छागं कूपे पश्यति दुर्मतिः।।

बहिर्मुखस्य मन्त्रस्य वृत्तयो या प्रकीर्तिताः।
ता एवान्तर्मुखस्यास्य शक्तयः परिकीर्तिताः।।

हस्तं हस्तेन संपीडच दन्तैर्दन्तांश्च पीडयन्।
अंगान्यंगैः समाक्रम्य जयेदादौ स्वकं मनः।।

तं ये पश्यन्ति ताद्रूप्यक्रमेणामलसंविदः।
ते पि तद्रूपिणस्तावत्येवास्यानुग्रहात्मता।।

पूर्णानन्दस्वभावः स्वजनहितकृते माययोपात्तकायः
कारुण्यादुद्दिधीर्षुजनमनवरतं मोहपंके निमग्नम्।
आविश्यान्तर्वसिष्ठं बहिरपि कलयन् शिष्यभावं वितेने
यः संवादेन शास्त्रामृतजलधिममुं रामचन्द्रं प्रपद्ये।।

अनुपाय आणवोपाय
गुरोर्वाक्याद्युक्तिप्रचयरचनोन्मार्जनवशात्

शक्तोपाय शाम्भवोपाय
समाश्वासाच्छास्त्रंप्रति समुदिताद्वापि कथितात्।

विलीने शंकाभ्रे हृदयगगनोद्भासिमहसः।
प्रभोः सूर्यस्येव स्पृशत् चरणान्ध्वान्तजयिनः।।

अर्थेषु तद्भोगविधौ तदुत्थे दुःखे सुखे वा गलिताभिशंकम्।
अनाविशन्तोऽपि निमग्नचित्ता जानन्ति वृत्तिक्षयसौख्यमन्तः।।

अनुत्तरेऽभ्युपायोऽत्र ताद्रूप्यादेव वर्णितः।
ज्वलितेष्वपि दीपेषु धर्मांशुः किं न भासते।।

ततोऽपि परमंज्ञानमुपायादिविवर्जितम्।
आनन्दशक्तिविश्रान्तमनुत्तरमिहोच्यते।।

प्रज्ञाप्रासादमारुह्य अशोच्यः शोचतो जनान्।
भूमिष्ठान्निव शैलस्थः सर्वान् प्राज्ञोऽनुपश्यति।।

अविकल्पपथारूढो येन येन पथा विशेत्।
धरासदाशिवान्तेन तेन तेन शिवीभवेत्।।

यथास्थितस्तथैवास्व मा गाः बाह्यमथान्तरम्।
केवलं चिद्विकासेन विकारनिकरान् जहि।।

संसारजीर्णतरुमूल कलापकल्प
संकल्पसान्तरतया परमार्थवह्नेः।
स्युर्विस्फुलिंगकणिका अपि चेत्तदन्ते
देदीप्यते विमलबोधहुताशराशिः।।

शास्त्रविरुद्धाचरणात् कृष्णं ये कर्म विदधते।
तत्र भीमैर्लोकपुरुषैः पीडचन्ते भोगपर्यन्तम्।।

ये सकृदपि परमेशं शिवमेकाग्रेण चेतसा शरणं।
यान्ति न ते नरकजुषः कृष्णं तेषां सुखाल्पतादायि।।

अस्वतन्त्रस्य कर्तृत्वं नहि जातूपपद्यते।
वस्तुतः सर्वभावानां कर्तेशानः परः शिवः।।

तथा च तेषां हेतूनां संयोजनवियोजने।
नियते शिव एवैकः स्वतन्त्रः कर्तृतामियात्।।

बहवो गुरवः सन्ति शिष्य वित्तापहारकाः।
दुर्लभोऽयं गुरुर्देवि! शिष्य सन्तापहारकः।।

नमः स्वच्छन्दभैरवाय

त्रिपञ्चनयनं देवं जटामुकुटमण्डितम्।
चन्द्रकोटिप्रतीकाशं चन्द्रार्धकृतशेखरम्।।

पञ्चवक्त्रं विशालाक्षं सर्पगोनासमण्डितम्।
वृश्चिकैरग्निवर्णाभैर्हारिण तु विराजितम्।।

कपालमालाभरणं खड्गखेटकधारिणम्।
पाशांकुशधरं देवं शरहस्तं पिनाकिनम्।।

वरदाभयहस्तं च मुण्डखट्वांगधारिणम्।
वीणाडमरुहस्तं च घण्टाहस्तं त्रिशूलिनम्।।

वज्रंदण्डकृताटोपं परश्वायुधहस्तकम्।
मुद्गरेण विचित्रेण वर्तुलेन विराजितम्।।

सिंहचर्मपरीधानं गजचर्मोत्तरीयकम्।
अष्टादशभुजं देवं नीलकण्ठं सुतेजसम्।।

ऊर्ध्ववक्त्रं महेशानि स्फटिकाभं विचिन्तयेत्।
आपीतं पूर्वकंवत्रं तु नीलोत्पलदलप्रभम्।।

दक्षिणं तु विजानीयाद्वामं चैव विचिन्तयेत्।
दाडिमीकुसुमप्रख्यं कुकुंमोदकसंन्निभम्।।

चन्द्रार्बुदप्रतीकाशं पश्चिमं तु विचिन्तयेत्।
स्वच्छन्दभैरवं देवं सर्वकामफलप्रदम्।।

ध्यायते यस्तु युक्तात्मा क्षिप्रं सिध्यति मानवः।
या सा पूर्वं मया ख्याता अघोरी शक्तिरुत्तमा।।

भैरवं पूजयित्वा तु तस्योत्संगे तु तां न्यसेत्।
यादृशं भैरवं रूपं भैरव्यास्तादृगेव हि।।

ईषत्करालवदनां गम्भीरविपुलस्वनाम्।
प्रसन्नास्यां सदा ध्यायेद्भैरवीं विस्मितेक्षणाम्।।

ॐ श्रीबहुरूपगर्भस्तोत्रम्।

ब्रह्मादिकारणातीतं स्वशक्त्यानन्दनिर्भरम्।
नमामि परमेशानं स्वच्छन्दं वीरनायकम्।।

कैलासशिखरासीनं देवदेवं जगद्गुरुम्।
पप्रच्छ प्रणता देवी भैरवं विगतामयम्।।

श्रीदेव्युवाच

प्रायश्चित्तेषु सर्वेषु समयोल्लंघनेषु च।
महाभयेषु घोरेषु तीव्रोपद्रवभूमिषु।।

च्छिद्रस्थानेषु सर्वेषु सदुपायं वद प्रभो।
येनायासेन रहितो निर्दोषश्च भवेन्नरः।।

श्रीभैरव उवाच

श्रृणु देवि परं गुह्यं रहस्यं परमाद्भुतम्।
सर्वपापप्रशमनं सर्वदुःखनिवारणम्।।

प्रायश्चित्तेषु सर्वेषु तीव्रेष्वपि विमोचनम्।
सर्वच्छिद्रापहरणं सर्वार्तिविनिवारकम्।।

समयोल्लंघने घोरे जपादेव विमोचनम्।
भोगमोक्षप्रदं देवि सर्वसिद्धिफलप्रदम्।।

शतजाप्येन शुद्धयन्ति महापातकिनोऽपि ये।
तदर्धं पातकं हन्ति तत्पादेनोपपातकम्।।

कायिकं वाचिकं चैव मानसं स्पर्शदोषजम्।
प्रमादादिच्छया वापि सकृज्जाप्येन शुद्धयति।।

यागारम्भे च यागान्ते पठितव्यं प्रयत्नतः।
नित्ये नैमित्तिके काम्ये परस्याप्यात्मनोऽपि वा।।

निश्छिद्रकरणं प्रोक्तं स्वभावपरिपूरकम्।
द्रव्यहीने मन्त्रहीने ज्ञानयोगविवर्जिते।।

भक्तिश्रद्धाविरहिते शुद्धिशून्ये विशेषतः।
मनोविक्षेपदोषे च विलोमे पशुवीक्षिते।।

विधिहीने प्रमादे च जप्तव्यं सर्वकर्मसु।
नातः परतरो मन्त्रो नातः परतरा स्तुतिः।।

नातः परतरा काचित्सम्यक्प्रत्यंगिरा प्रिये।
इयं समयविद्यानां राजराजेश्वरीश्वरि।।

परमाप्यायनं देवि भैरवस्य प्रकीर्तितम्।
प्रीणनं सर्वदेवानां सर्वसौभाग्यवर्धनम्।।

स्तवराजमिमं पुण्यं श्रृण्वष्वावहिता प्रिये।।

अस्य श्रीबहुरूपभट्टारकस्तोत्रमन्त्रस्य, श्रीवामदेवऋषिः
अनुष्टुप्छन्दः, श्रीबहुरूपभट्टारको देवता, आत्मनो वाङ्मनः-
कायोपार्जितपापनिवारणार्थं चतुर्वर्गसिद्ध्यर्थे पाठे विनियोगः।
अघोरेभ्यो—अंगुष्ठाभ्यां नमः, थघोरेभ्यो—तर्जनीभ्यां नमः,
घोर घोरतरेभ्यश्चमध्यमाभ्यां नमः, सर्वतःअनामिकाभ्यां नमः
शर्वसर्वेभ्यो-कनिष्ठिकाभ्यां नमः, नमस्ते रुद्ररुपेभ्यः
करतल कर पृष्ठाभ्यां नमः।
अघोरेभ्यो-हृदयाय नमः, थघोरेभ्यो-शिरसे स्वाहा,
घोर घोरतरेभ्यश्च शिखायै वौषट्, सर्वतः-कवचाय हुम्
शर्वसर्वेभ्यो-नेत्रत्रयाय वषट्, नमस्तेरुद्ररूपेभ्यः—अस्त्राय फट्।
अघोरमन्त्रेण प्राणायामः।

अथ ध्यानम्

वामे खेटकपाशशार्ङ्गविलस- द्दण्डं च वीणाण्टिके
बिभ्राणं ध्वजमुद्गरौ स्वनिभदेव्यंकं कुठारं करे।
दक्षेस्यंकुशकन्दलेषुडमरून्वज्रत्रिशूलाभयान्
रुद्रस्थं शरवक्त्रमिन्दुधवलं स्वच्छन्दनाथं स्तुमः।।

ॐ बहुरूपाय विद्महे कोटराक्षाय धीमहि तन्नोऽघोरः प्रचोदयात्।।

मूलं

ओम् अघोरेभ्योऽथ घोरेभ्यो घोरघोरतरेभ्यश्च सर्वतः
शर्व सर्वेभ्यो नमस्ते रुद्ररूपेभ्यः।।

ॐ नमः परमाकाशशायिने परमात्मने।
शिवाय परसंशान्तनिरानन्दपदाय ते।।

अवाच्यायाप्रमेयाय प्रमात्रे विश्वहेतवे।
महासामान्यरूपाय सत्तामात्रैकरूपिणे।।

घोषादिदशधाशब्दबीजभूताय शम्भवे।
नमः शान्तोग्रघोरादिमन्त्रसंरम्भगर्भिणे।।

रेवतीसंगविस्रम्भसमाश्लेषविलासिने।
नमः समरसास्वादपरानन्दोपभोगिने।।

भोगपाणे नमस्तुभ्यं योगीशैः पूजितात्मने।
द्वयनिर्दलनोद्योगसमुल्लासितमूर्तये।।

थरत्प्रसरविक्षोभविसृष्टाखिलजन्तवे।
नमो मायास्वरूपाय स्थाणवे परमेष्ठिने।।

घोरसंसारसंभोगदायिने स्थितिकारिणे।
कलादिक्षितिपर्यन्तपालिने विभवे नमः।।

रेहणाय महामोहध्वान्तविध्वंसहेतवे।
हृदयाम्भोजसंकोचभेदिने शिवभानवे।।

भोगमोक्षफलप्राप्तिर्हेतुयोगविधायिने।
नमः परमनिर्वाणदायिने चन्द्रमौलये।।

घोषाय सर्वमन्त्राणां सर्ववाङ्मयमूर्तये।
नमः सर्वाय शर्वाय सर्वपाशापहारिणे।।

रवणाय रवान्ताय नमस्ते रावराविणे।
नित्याय सुप्रबुद्धाय सर्वान्तरतमाय ते।।

घोषाय परनादान्तश्चराय खचराय ते।
नमो वाक्पतये तुभ्यं भवाय भवभेदिने।।

रमणाय रतीशांगदाहिने चित्रकर्मिणे।
नमः शैलसुताभर्त्रे विश्वकर्त्रे महात्मने।।

तमःपारप्रतिष्ठाय सर्वान्तपदगाय ते।
नमः समस्ततत्त्वाध्वव्यापिने चित्स्वरूपिणे।।

रेवद्धराय रुद्राय नमस्ते रूपरूपिणे।
परापरपरिस्पन्दमन्दिराय नमो नमः।।

भरिताखिलविश्वाय योगिगम्याय योगिने।
नमः सर्वेश्वरेशाय महाहंसाय शम्भवे।।

चर्च्याय चर्चनीयाय चर्चकाय चराय ते।
रवीन्दुसन्धिसंस्थाय महाचक्रेश ते नमः।।

सर्वानुस्यूतरूपाय सर्वाच्छादकशक्तये।
सर्वभक्षाय शर्वाय नमस्ते सर्ववेदिने।।

रम्याय वल्लभाक्रान्तदेहार्धाय वियोगिने।
नमः प्रपन्नदुष्प्राप्यसौभाग्यफलदायिने।।

तन्महेशाय तत्त्वार्थवेदिने भवभेदिने।
महाभैरवनाथाय भक्तिगम्याय ते नमः।।

शक्तिगर्भप्रबोधाय शरण्यायाशरीरिणे।
शान्तिपुष्टयादिसाध्यार्थसाधकाय नमोऽस्तु ते।।

खत्कुण्डलिनीगर्भप्रबोधप्राप्तशक्तये।
उत्स्फोटनापटुप्रौढ़परमाक्षरमूर्तये।।

समस्तव्यस्त संग्रस्तरश्मिजालोदरात्मने।
नमस्तुभ्यं महामीनरूपिणे विश्वगर्भिणे।।

रेवारणिसमुद्भूतवह्निज्वालावभासिने।
घनीभूतविकल्पात्मविश्वबन्धविलापिने।।

भोगिनीस्यन्दनारूढिप्रौढिमालब्धगर्विणे।
नमस्ते सर्वभक्ष्याय परमामृतलाभिने।।

णफकोटिसमावेशभरिताखिलसृष्टये।
नमः शक्तिशरीराय कोटिद्वितयसंगिने।।

महामोहमलाक्रान्तजीववर्गावबोधिने।
महेश्वराय जगतां नमोऽकारणबन्धवे।।

स्तेनोन्मूलनदक्षैकस्मृतये विश्वमूर्तये।
नमस्तेऽस्तु महादेवनाम्ने परस्वधात्मने।।

रुग्द्राविणे महावीर्यरुरुवंशविनाशिने।
रुद्राय द्राविताशेषबन्धनाय नमोऽस्तु ते।।

द्रवत्पररसास्वादचर्वणोद्युक्तशक्तये।
नमस्त्रिदशपूज्याय सर्वकारणहेतवे।।

रूपातीत नमस्तुभ्यं नमस्ते बहुरूपिणे।
त्र्यम्बकाय त्रिधामान्तश्चारिणे चित्रचक्षुषे।।

पेशलोपायलभ्याय भक्तिभाजां महात्मनाम्।
दुर्लभाय मलाक्रान्तचेतसां तु नमो नमः।।

भवप्रदाय दुष्टानां भवाय भवभेदिने।
भव्यानां तन्मयानां तु सर्वदाय नमो नमः।।

अणूनां मुक्तये घोरघोरसंसारदायिने।
घोरातिघोरमूढानां तिरस्कर्त्रे नमो नमः।।

सर्वकारणकलापकल्पितो-
ल्लाससंकुलसमाधिविष्ठराम्।
हार्दकोकनदसंस्थितामपि
तां प्रणौमि शिववल्लभामजाम्।।

सर्वजन्तुहृदयाब्जमण्डलो-
द्भूतभावमधुपानलुम्पटाम्।
वर्णभेदविभवान्तरस्थितां
तां प्रणौमि शिववल्लभामजाम्।।

इत्येवं स्तोत्रराजेशं महाभैरवभाषितम्।
योगिनीनां परं सारं न दद्याद्यस्य कस्यचित्।।

अदीक्षिते शठे क्रूरे निःसत्ये शुचिवर्जिते।
नास्तिके च खले मूर्खे प्रमत्ते विप्लुतेऽलसे।।

गुरुशास्त्रसदाचारदूषके कलहप्रिये।
निन्दके चुम्भके क्षुद्रेऽसमयज्ञे च दांभिके।।

दाक्षिण्यरहिते पापे धर्महीने च गर्विते।
भक्तियुक्ते प्रदातव्यं न देयं परदीक्षिते।।

पशूनां सन्निधौ देवि नोच्चार्यं सर्वथा क्वचित्।
अस्य स्मृतिमात्रेण विघ्ना नश्यन्त्यनेकशः।।

गुह्यका यातुधानाश्च वेताला राक्षसादयः।
डाकिन्यश्च पिशाचाश्च क्रूरसत्त्वाश्च पूतनाः।।

नश्यन्ति सर्वे पठितस्तोत्रस्यास्य प्रभावतः।
खेचरी भूचरी चैव डाकिनी शाकिनी तथा।।

ये चान्ये बहुधा भूता दुष्टसत्त्वा भयानकाः।
व्याधिदौर्भिक्षदौर्भाग्यमारिमोहविषादयः।।

गजव्याघ्राश्च ये घोरा पलायन्ते दिशो दश।
सर्वे दुष्टाः प्रणश्यन्ति चेत्याज्ञा पारमेश्वरी।।

इति श्रीललितस्वच्छन्दे
बहुरूपगर्भस्तोत्रराजः संपूर्णः।
इति शिवम्।

श्री गुरवे शिवाय नमः

अस्त्यस्मिन्महसां महानिधिरसौ देवो विवस्वान् महान्
यस्मिञ्जाग्रति जाग्रतीव रजनीसुप्ता इमे जन्मिनः।
किन्त्वेका महती ततो विजयते श्रीदैशिकाङ्घ्रिद्युति-
र्यद्भासाच्छुरितं चिरन्तनतमो हित्वैव जागर्ति सत्।।

ऊर्जस्य शुक्ले च तिथौ चतुर्थ्यां जगज्जिगीषून् स्वत ऊर्जयन्तः।
आविर्बभूवुर्महताबकाकाः काश्मीरकण्डाभिधजन्मभूमौ।।

येऽस्माननेकानभिधाय दिव्यं ज्ञानञ्च जग्मुर्निजधाममध्ये।
तपस्य शुक्लस्य तिथौ द्वितीये सूर्याब्जयोः सन्धिमयेऽप्यनेहसि।।

अद्यापि येऽस्मानभिबोधयन्ति प्रयाणरूपेण निजेन कर्मणा।
प्रकाशरूपप्रथितैकधाम्नि रवीन्दुमध्ये जहतः शरीरम्।।

यज्जन्मना शर्मणगोष्यवात्स्यगोत्रं तथागोत्रमवापि लोके।
अभ्युन्नतिं लोकहितैकहेतुं सर्वासु दिक्षु प्रसरत्प्रभावाम्।।

तानद्य सर्वेवयमाविशन्तो गुरून्स्मरन्तो मनसाथ वाचा।
विशुद्धभक्त्या प्रणता नमामः स्थिताञ्च ज्ञानप्रभयागतानपि।।

तज्ज्ञानगोत्रे गुरवश्चकासति ज्ञानप्रभाभिः प्रसृताभिरद्य।
श्रीलक्ष्मणाख्या नमतां जनानां दृष्ट्यैव दृष्टेस्तमसां विघातकाः।।

गुरुशिष्यस्वरूपेण दृश्यते यद्यपि द्विधा।
तथापि श्रीगुरुः साक्षादेक एव विराजते।।

मद्धृत्स्थं सुभगाकारं सर्वसौख्यकरं परम्।
भवतापहरं शूरं वरेण्यं विदुषां मतम्।।

महनीयाकृतिं देवं श्रीगुरुं परमं विभुम्।
लक्ष्मणं लक्षणैर्युक्तं प्रणौमि सर्वदं सदा।।

दासोऽहमस्मि मूढोऽहं त्वद्दयावञ्चितः खलु।
कृपाकटाक्षपूरैस्त्वं पूरय विरसं मनः।।

कौलाख्ये शैवशास्त्रे यः विग्रहीव कलौ युगे।
सन्तारयति ज्ञानस्य पोतेन शरणागतान्।।

अवाप्तुकामो भवदाश्रयं हि विषण्णचेता विभवाब्धिमग्नः।
त्वत्पूतपादाब्जपरागकांक्षी द्वारे तव प्राञ्जलिरागतोऽस्मि।।

धुनोति वायुर्हि यथा महीरुहान्
इयं तथा दुष्प्रकृतिर्मनुष्यान्।
परं भवद्दर्शनवातपालितान्
नरान् समर्थोऽस्ति न कोऽपि धर्षितुम्।।

अल्पज्ञान् कुजनान् धीमान् कौलाचारविवर्जितान्।
नवाभिनवकैर्भावैः प्रपूरयति मद्गुरुः।।

पूतं विविक्तं दशरागवर्जितं सत्त्वे सुनिष्ठं नयनामृतं परम्।
स्वतन्त्रविद्वज्जनवृन्दवन्दितं गुरुं दयार्द्रं प्रणमामि नित्यम्।।

न भोगविभवं कांक्षे न सुखं नार्थसञ्चयः।
परमेका भवद्भक्तिरस्तु मे सर्वसौख्यदा।।

सुदर्शनः सदास्तु मामनन्तानन्दवर्धकः।
संविन्मार्गो भवत्प्राप्तिसाधकः त्रिगुणात्मकः।।

नासीनस्य न सुप्तस्य भ्रमतो नोत्थितस्य न।
त्वामन्तरा शमो नास्ति दिवा रात्रौ च जाग्रतः।।

त्वग् मज्जास्थि हृदि व्याप्तं जन्मान्तरैरुपार्जितम्।
तत्सर्वं नाशयत्वीश! यदघौघं मया कृतम्।।

महिम्नस्तोत्रम्

महिम्नः पारं ते परमविदुषो यद्यसदृशी
स्तुतिर्ब्रह्मादीनामपि तदवसन्नास्त्वयि गिरः।
अथावाच्यः सर्वः स्वमति परिणामावधि गृणन्
ममाप्येष स्तोत्रे हर निरपवादः परिकरः।।

अतीतः पन्थानं तव च महिमा वाङ्मनसयोर-
तद्व्यावृत्त्या यं चकितमभिधत्ते श्रुतिरपि।
स कस्य स्तोतव्यः कतिविधगुणः कस्य विषयः
पदे त्वर्वाचीने पतति न मनः कस्य न वचः।।

मधुस्फीता वाचः परमममृतं निर्मितवत-
स्तव ब्रह्मन् किं वागऽपि सुरगुरोर्विस्मयपदम्।
मम त्वेतां वाणीं गुणकथनपुण्येन भवतः
पुनामीत्यर्थेऽस्मिन् पुरमथन बुद्धिर्व्यवसिता।।

तवैश्वर्यं यत्तज्जगदुदयरक्षाप्रलयकृत्
त्रयीवस्तुव्यस्तं तिसृषु गुणभिन्नासु तनुषु।
अभव्यानामस्मिन्वरद रमणीयामरमणीं
विहन्तुं व्याक्रोशीं विदधत इहैके जडधियः।।

किमीहः किंकायः स खलु किमुपायस्त्रिभुवनं
किमाधारो धाता सृजति किमुपादान इति च।
अतर्क्यैश्वर्ये त्वय्यनवसरदुःस्थो हतधियः
कुतर्कोऽयं कांश्चिन्मुखरयति मोहाय जगतः।।

अजन्मानो लोकाः किमवयववन्तो पि जगताम्-
अधिष्ठातारं किं भवविधिरनादृत्य भवति।
अनीशो वा कुर्याद्भुवनजनने कः परिकरो
यतो मन्दास्त्वां प्रत्यमरवर संशेरत इमे।।

त्रयी सांख्यं योगः पशुपतिमतं वैष्णवमिति
प्रभिन्ने प्रस्थाने परमिदमदः पथ्यमिति च।
रुचीनां वैचित्र्यादृजुकुटिलनानापथजुषां
नृणामेको गम्यस्त्वमसि पयसामर्णव इव।।

महोक्षः खटवांगं परशुरजिनं भस्म फणिनः
कपालं चेतीयत्तव वरद तन्त्रोपकरणम्।
सुरास्तां तामृद्धिं दधति तु भवद्भ्रू प्रणिहिताम्
न हि स्वात्मारामं विषयमृगतृष्णा भ्रमयति।।

ध्रुवं कश्चित्सर्वं सकलमपरस्त्वध्रु वमिदं
परो ध्रौव्याध्रौव्ये जगति गदति व्यस्तविषये।
समस्तेऽप्येतस्मिन्पुरमथन! तैर्विस्मित इव
स्तुवञ्जिह्रेमि त्वां न खलु ननु धृष्टा मुखरता।।

तवैश्वर्यं यत्नाद् यदुपरि विरञ्चिर्हरिरधः
परिच्छेत्तुं यातावनलमनल स्कन्धवपुषः।
ततो भक्तिश्रद्धाभरगुरुगृणद्भ्यां गिरिश यत्
स्वयं तस्थे ताभ्यां तव किमनुवृत्तिर्न फलति।।

अयत्नादासाद्य त्रिभुवनमवैरव्यतिकरं
दशास्यो यद् बाहूनभृत रणकण्डूपरवशान्।
शिरः पद्मश्रेणीरचितचरणाम्भोरुहबलेः
स्थिरायास्त्वद् भक्तेस्त्रिपुरहर विस्फूर्जितमिदम्।।

अमुष्य त्वत्सेवासमधिगतसारं भुजवनं
बलात् कैलासेऽपि त्वदधिवसतौ विक्रमयतः।
अलभ्या पातालेऽप्यलसचलिताङ्गुष्ठशिरसि
प्रतिष्ठा त्वय्यासीद् ध्रुवमुपचितो मुह्यति खलः।।

यदृद्धिं सुत्राम्णो वरद परमोच्चैरपि सती-
मधश्चक्रे बाणः परिजनविधेयत्रिभुवनः।
न तच्चित्रं तस्मिन्वरिवसितरि त्वच्चरणयो-
र्न कस्याप्युन्नत्यै भवति शिरसस्त्वय्यवनतिः।।

अकाण्डब्रह्माण्डक्षयचकितदेवासुरकृपा-
विधेयस्यासीद् यस्त्रिनयन विषं संहृतवतः।
स कल्माषः कण्ठे तव न कुरुते न श्रियमहो
विकारोऽपिश्लाघ्यो भुवनभयभंगव्यसनिनः।।

असिद्धार्था नैव क्वचिदपि सदेवासुरनरे
निवर्तन्ते नित्यं जगति जयिनो यस्य विशिखाः।
स पश्यन्नीश त्वामितरसुरसाधारणमभूत्
स्मरः स्मर्तव्यात्मा नहि वशिषु पथ्यः परिभवः।।

महीपादाघाताद् व्रजति सहसा संशयपदं
पदं विष्णोर्भ्राम्यद्भुजपरिघरुग्णग्रहगणम्।
मुहुर्द्यौर्दौस्थ्यं यात्यनिभृत जटाताडिततटा
जगद्रक्षायै त्वं नटसि ननु वामैव विभुता।।

वियद्व्यापी तारागणगुणितफेनोद्गमरुचिः
प्रवाहो वारां यः पृषतलघुदृष्टः शिरसि ते।
जगद्द्वीपाकारं जलधिवलयं तेन कृतमि-
त्यनेनैवोन्नेयं धृतमहिमदिव्यं तव वपुः।।

रथः क्षोणी यन्ता शतधृतिरगेन्द्रो धनुरथो
रथांगे चन्द्रार्कौ रथचरणपाणिः शर इति।
दिधक्षोस्ते कोऽयं त्रिपुरतृणमाडम्बर विधि-
र्विधयैः क्रीडन्त्यो न खलु परतन्त्राः प्रभुधियः।।

हरिस्ते साहस्रं कमल बलिमाधाय पदयो-
र्यदेकोने तस्मिन् निजमुदहरन्नेत्र कमलम्।
गतो भक्त्युद्रेकः परिणतिमसौ चक्रवपुषा
त्रयाणां रक्षायै त्रिपुरहर जागर्ति जगताम्।।

क्रतौ सुप्ते जाग्रत्त्वमसि फलयोगे क्रतुमतां
क्वकर्म प्रध्वस्तं फलति पुरुषाराधनमृते।
अतस्त्वां संप्रेक्ष्य क्रतुषु फलदान प्रतिभुवं
श्रुतौ श्रद्धां बध्वा दृढ़परिकरः कर्मसु जनः।।

क्रियादक्षो दक्षः क्रतुपतिरधीशस्तनुभृता-
मृषीणामार्त्विज्यं शरणद सदस्याः सुरगणाः।
क्रतुभ्रंशस्त्वत्तः क्रतुफल विधानव्यसनिनो
ध्रुवं कर्तुः श्रद्धाविधुरमभिचाराय हि मखाः।।

प्रजानाथं नाथ प्रसभमभिकं स्वां दुहितरं
गतं रोहिद्भूतां रिरमयिषुमृष्यस्य वपुषा।
धनुष्पाणेर्यातं दिवमपि सपत्राकृतममुं
त्रसन्तं तेऽद्यापि त्यजति न मृगव्याधरभसः।।

स्वलावण्याशंसा धृतधनुषमह्नाय तृणवत्
पुरः प्लुष्टं दृष्ट्वा पुरमथन पुष्पायुधमपि।
यदि स्त्रैणं देवी यमनिरत देहार्धघटना-
दवैति त्वामद्धा बत वरद मुग्धा युवतयः।।

श्मशानेष्वाक्रीड़ा स्मरहर पिशाचाः सहचरा-
श्चिताभस्मालेपः सृगपि नृकरोटीपरिकरः।
अमंगल्यं शीलं तव भवतु नामैवमखिलं
तथापि स्मर्तृणां वरद परमं मंगलमसि।।

मनः प्रत्यक्चित्ते सविधमवधायात्तमरुतः
प्रहृष्यद्रोमाणः प्रमदसलिलोत्संगितदृशः।
यदा लोक्याह्लादं ह्रद इव निमज्यामृतमये
दधत्यन्तस्तत्त्वं किमपि यमिनस्तत् किल भवान्।।

त्वमर्कस्त्वं सोमस्त्वमसि पवनस्त्वं हुतवह-
स्त्वमापस्त्वं व्योम त्वमु धरणिरात्मा त्वमिति च।
परिच्छिन्नामेवं त्वयि परिणता बिभ्रतु गिरं
न विद्मस्तत्तत्त्वं वयमिहतु यत्त्वं न भवसि।।

त्रयीं तिस्रोवृत्तीस्त्रिभुवनमथो त्रीनपि सुरा-
नकाराद्यैर्वर्णैस्त्रिभिरभिदधत् तीर्णविकृति।
तुरीयं ते धाम ध्वनिभिरवरुन्धानमणुभिः
समस्तं व्यस्तंत्वां शरणद गृणात्योमिति पदम्।।

भवः शर्वो रुद्रः पशुपतिरथोग्रः सहमहां-
स्तथा भीमेशानाविति यदभिधानाष्टकमिदम्।
अमुष्मिन्प्रत्येकं प्रविचरति देव श्रुतिरपि
प्रियायास्मै धाम्ने प्रणिहितनमस्योऽस्मि भवते।।

वपुष्प्रादुर्भावात् अनमितमिदं जन्मनि पुरा
पुरारे नैवाहं क्वचिदपि भवन्तं प्रणतवान्।
नमन्मुक्तः संप्रत्यतनुरहमग्रेप्यनतिमान्
महेश क्षन्तव्यं तदिदमपराधद्वयमपि।।

नमो नेदिष्ठाय प्रियदव दविष्ठाय च नमो
नमः क्षोदिष्ठाय स्मरहर महिष्ठाय च नमः।
नमो वर्षिष्ठाय त्रिनयन यविष्ठाय च नमो
नमः सर्वस्मै ते तदिदमतिसर्वाय च नमः।।

बहलरजसे विश्वोत्पत्तौ भवाय नमोनमः
प्रबलतमसे तत्संहारे हराय नमोनमः।
जनसुखकृते सत्वोद्रिक्तौ मृडाय नमोनमः
प्रमहसि पदे निस्त्रैगुण्ये शिवाय नमोनमः।।

कृशपरिणति चेतः क्लेशवश्यं क्व चेदं
क्व च तव गुणसीमोल्लंघिनी शश्वदृद्धिः।
इति चकितममंदीकृत्य मां भक्तिराधाद्
वरद, चरणयोस्ते वाक्यपुष्पोपहारम्।।

असितगिरिसमं स्यात्कंजलं सिन्धुपात्रे
सुरतरुवरशाखा लेखनी पत्रमुर्वी।
लिखति यदि गृहीत्वा शारदा सर्वकालं
तदपि तव गुणानामीश पारं न याति।।

श्रीपुष्पदन्त मुखपंकजनिर्गतेन
स्तोत्रेण किल्बिषहरेण हरप्रियेण।
कंठस्थितेन पठितेन समाहितेन
सुप्रीणितो भवति भूतपतिर्महेशः।।

महेशान्नापरो देवो महिम्नो नापरा स्तुतिः।
अघोरान्नापरो मंत्रो नास्ति तत्त्वं गुरोः परम्।।

इत्येषा वाङ्मयी पूजा श्रीमच्छंकरपादयोः।
अर्पिता तेन देवेशः प्रीयतां मे सदा शिवः।।

———————— o ————————